स्वप्नभंग

स्वप्नभंग

प्रतापचन्द्र चन्द्र



राजपाल एण्ड सन्ज़, कश्मीरी गेट, दिल्ली

प्रथम पर्व

"आप अगर कोशिश करते तो मेरा घर नहीं टूटता। आपने कोशिश नहीं की, इसीलिए मेरा घर टूटा," अपरिचित युवती ने मुझपर सीधा अभियोग लगाया।

सुबह का समय। मैं अपने कमरे में बैठा अखबार पढ़ रहा था। तभी यह लड़की आई। नमस्कार करके खड़ी हो रही। मैंने अखबार से सिर उठाकर उसे बैठने को कहा। वह बैठी। मैंने पूछा, "कैसे आई ?"

लड़की ने आगा-पीछा सोचे बिना ही मुझपर यह अभियोग लगा दिया। मैं हैरान। पूछा, "क्या मतलब ? मेरी वजह से तुम्हारा घर टूटा ? मैं···मैं तो···"

"तुम्हें पहचानता तक नहीं," लड़की ने मेरे मुंह की बात छीन ली, "जरा अच्छी तरह देखिए मुझे ! पहचानते हैं या नहीं ?"

मैं उसे गौर से देखने लगा। कुछ गोलाई लिए हुए भरा-भरा-सा चेहरा; बड़ी-बड़ी आंखें; आंखों की कोरों पर शायद काजल की हल्की सी रेखा थी, जिनके काले घेरे में भूरी प्राणोच्छ्वल पुतलियां, ओंठ कुछ ज्यादा ही भरे हुए, किंतु आकर्षक, रंग गोरा; सुचिक्कन केशों में तेल, मांग सिंदूर-विहीन। आसमानी साड़ी उसकी यौवनपुष्ट देह को पूरी तरह छिपा भी नहीं पा रही थी। सुन्दर थी लड़की।

"अब भी नहीं पहचान सके ?" युवती ने पूछा, "हालांकि कितनी ही बार मुझे देखा होगा। आपके क्लब के नाटकों में मैंने कई बार काम किया है।"

"मैं तो रिहर्सल वगैरह में खास जाता नहीं हूं। स्टेज पर तुम्हें देखा भी हो, तो बिना मेक-अप के पहचानना मुश्किल है।"

"यह तो सच है," लड़की मुस्कराकर बोली, "मैं मालती मित्र हूं। अब पहचाना ?"

"हां, हां, याद आ गया," मैं बोल उठा, "मेरे 'उपनगर' नाटक में रूपसी का रोल क्या खूब किया था तुमने !"

अब मालती मित्र की बातें याद आ गई थीं। हमारे क्लब के 'नाट्याचार्य' थे वेणीदा। उन्हीं से इसके संबंध में कुछ बातें सुनी थीं। एमेच्योर दलों में कुछ लड़कियां नियमित रूप से अभिनय करती हैं। दक्षिणा भी लेती हैं। मालती भी उन्हींमें से एक है।

वेणीदा ने ही उसका कहीं से पता लगाया था। खुद ही अभिनय की तालीम देकर उसे तैयार किया था। मालती नियमित रूप से रिहर्सल करती थी। कभी-भी कोई गलत कदम उठाते उसे नहीं देखा गया। अपना काम निबटने पर सीधी घर लौट जाती। उसके हाव-भाव में एक ऐसा सहज गांभीर्य था कि उससे छेड़-छाड़ करने की कोशिश भी कोई नहीं करता था। इसीसे वेणीदा भी उससे बहुत खुश थे। अचानक ही उसे जब वह कठिन रोल दिया गया तो और लड़कियों को कुछ ईर्ष्या भी हुई थी, पर वेणीदा ने किसीकी परवाह नहीं की। दरिद्र, रुग्ण, गंजेड़ी पति के सामने ही रूपसी उसके मालिक के घर जा बैठी थी, पर पति के प्रति भी उसके मन में कुछ मोह था। यह सब होते हुए भी वह साथ ही एक नौजवान फुटबॉल-खिलाड़ी से प्रेम भी करती थी। ऐसा जटिल, किंतु जीवंत चरित्र एक नई अभिनेत्री को सौंपना दुःसाहस ही तो था, पर वेणीदा ने रंचमात्र भी चिंता नहीं की। और मालती ने भी उनके विश्वास की रक्षा की। मैंने भी देखा था वह नाटक। मालती के सजीव अभिनय ने नाटक में प्राण फूंक दिए थे।

पर उस दिन पर्दे की ओट में जो कुछ हुआ था, वह वेणीदा ने मुझे बाद में बताया। उससे मालती के चरित्र पर भी कुछ प्रकाश पड़ता है। रूपसी पति के मालिक करालीचरण के घर जा बैठी थी। उस मालिक का रोल किया था केशव दत्त ने। केशव का रंग-रूप भले ही भैंसे जैसा रहा हो, पर मिजाज का वह बड़ा रंगीन था। किसी व्यापारी दफ्तर में अच्छे पद पर था। अभिनय का उसे नशा था। बोनस और ओवरटाइम के रुपये वह नाटकों के ऊपर खुले हाथों खर्च करता था। सूरत-शक्ल हीरो जैसी तो थी नहीं, तो विलेन के ही रोल किया

था वह। अभिनय बुरा नहीं करता था। सिर्फ हमारे क्लब में ही नहीं, और भी कई जगह मिलाकर वह सारे साल नाटकों में भाग लेता रहता था। एमेच्योर कलाकारों में उसका खासा नाम था, और इसका घमण्ड भी उसे कम नहीं था। कई लड़कियों के साथ वह अभिनय कर चुका था। पर इस नवागता अभिनेत्री मालती के संग अभिनय के दौरान वह मानो अस्थिर हो उठा था। रिहर्सल मे प्रेम करते-करते वह शायद सचमुच ही मालती पर अनुरक्त होने लगा था। पहले तो किसीकी नजर इस ओर नही गई। रिहर्सल में अगर रात अधिक हो जाती तो केशव मालती को घर पहुंचा आने का आग्रह करता। पर मालती सदा उससे बचकर ही चलती। एक शाम वर्षा हो रही थी। मूसलाधार पानी बरस रहा था। कुछ देर मे ही सड़कें पानी में डूब गईं। उस दिन रिहर्सल जम नही पाया। बारिश रुकते ही सब घर जाने को व्यग्र हो उठे। सड़कों पर लगभग कमर-कमर पानी भरा था। मालती उस पानी में ही घर जाने को तैयार थी। वेणीदा कुछ परेशान हो उठे। केशव ने कहा, "चिंता किस बात की है! मैं रिक्शा करके उसे घर पहुंचा आता हूं।" आज मालती ने भी आपत्ति नही की।

अगले दिन क्लब मे मानो भूकंप-सा आ गया। मालती रिहर्सल करने नही आई। आया प्रसाद नामक एक युवक। अच्छा कसरती बदन। आते ही वेणीदा के पास जाकर गुर्राने-गरजने लगा। "बात क्या है?" वेणीदा ने पूछा।

प्रसाद बोला, "आप लोग शरीफ नही हैं, नीच हैं, महानीच!"

क्लब के और दो-एक सदस्य भी वहीं थे। वे भड़क उठे। वेणीदा ने उन्हें रोका। प्रसाद ने कहा, "मालती अब नाटक-वाटक करने नही आएगी।"

"क्यों? क्यों?"

"अपने उन केशवबाबू से पूछिए," प्रसाद बोला, "रेशमी कुर्ता और चुन्नटदार धोती पहनने से ही कोई शरीफ नही बन जाता।"

केशव दत्त तब तक आया नहीं था। वेणीदा ने कहा, "अरे भई प्रसाद, इतने गरम क्यों हो रहे हो ? बात क्या हुई, यह तो बताओ।"

"बात बताऊं ?" प्रसाद गुर्रा उठा, "कल आपके इस केशव दत्त ने रिक्शे में ही मालती के साथ बदतमीज़ी करने की कोशिश की थी। रिक्शे से कूदकर कमर-कमर पानी में मालती घर लौटी। नाटक करने आई है तो क्या इज्जत बेचकर ?"

वेणीदा कुछ संकुचित होकर बोले, "बात अगर सच है तो वाकई बड़ा अन्याय हुआ। मैं केशव को डपट दूंगा। ऐसे तो हमारे क्लब की बदनामी फैल जाएगी।"

प्रसाद तमककर बोला, "आप क्या डपटेंगे, मैं ही ठीक कर दूंगा उसे ! केशव दत्त ने अभी प्रसाद पाल को पहचाना नहीं है। मोचीपाड़ा थाने में दादाओं के रजिस्टर में मेरा नाम है। ओ० सी० अच्छी तरह से जानते हैं मुझे ! उनकी ही परवाह नहीं करता मैं, यह केशव दत्त क्या चीज है ? साइकिल की चेन से हड्डी-पसली एक कर दूंगा।"

वेणीदा ने कहा, "भैया मेरे, केशव की तरफ से मैं माफी मांगता हूं। आगे से ऐसा नहीं होगा। मालती कब आएगी रिहर्सल के लिए ? उसे भेज देना भैया !"

प्रसाद कुछ नरम पड़ा, "पानी में भीगकर उसे सर्दी लग गई है। गला बैठ गया है। आज नहीं आ सकती। अगले दिन आएगी।"

"शनिवार को फुल रिहर्सल है। उस दिन ज़रूर आ जाए, क्यों ?" वेणीदा ने कहा।

"ठीक है, कह दूंगा," प्रसाद चला गया।

केशव दत्त के क्लब में आते ही सब उसके चारों ओर घिर आए। केशव भड़ककर बोला, "जो किया है, ठीक किया है ! साली दो कौड़ी की औरत, मिजाज़ देखो उसका ! बहुत छोकरियां देखी हैं ऐसी। ऊपर से गुण्डे भेजकर धमका रही है। पता नहीं उसे, कितने मंत्री मेरे हमप्याला हैं ? ज्यादा चीं-चपड़ की तो इस प्रसाद को मीसा में अंदर करवा दूंगा।"

"और हमारा नाटक फांसी लगाकर लटक जाए, क्यों ?" वेणीदा कुछ चिढ़कर बोले, "केशव बाबू, आप अनुभवी अभिनेता हैं। आपको समझना चाहिए कि इस सबसे नुकसान हमारे नाटक का होगा—शायद बंद ही हो जाए। ऐसे समय यह सब करना क्या आपके लिए उचित है ?"

"क्या किया है मैंने !" केशव बोला, "रिक्शे में अगल-बगल बैठे थे दोनों—बदन से बदन सटा हुआ था। नीचे से पानी का स्रोत बहे जा रहा था, मन में ज़रा कविताई जागने लगी। अपने आप ही प्रेम-कविताओं की दो-चार लाइनें निकल पड़ीं मुंह से। रिक्शे का पहिया एक गड्ढे में पड़ा तो झटके से मेरा सिर उसके सिर के करीब हो गया। मुझसे रहा नहीं गया तो उसे चूम लिया मैंने।"

"वाह ! खूब मीठा लगा ना !" किसी ने छौंक लगाया।

"अरे, बिलकुल बेस्वाद था जनाब, एकदम बेस्वाद।"

"कैसे भई ?"

"झटके-से चेहरा हटाकर, पर्दा उठाकर छोकरी भरे पानी में ही कूद पड़ी। फिर मुझे 'असभ्य' कहकर पानी में चलती हुई अंधेरे में ही गुम हो गई। खैरियत थी कि किसी और ने नहीं देखा। रिक्शावाला जरूर बौखला गया था। उससे कह दिया, "माईजी का पेट दरद हो गया"' इससे जल्दी से घर चला गया," अपने ही मजाक पर केशव दत्त ठठाकर हंस पड़ा।

"बस इतना ही ?" किसी ने कहा, "नहीं, और भी कुछ जरूर हुआ था, आप मुंह से फूट नहीं रहे हैं।"

"कसम से," केशव दत्त हलफ उठाने लगा, "एक चुम्मा, बस। इतने में ही ये धमकियां !"

"जो भी हो," वेणीदा ने कहा, "हमारा नाटक हो जाने दीजिए। नहीं तो बड़ी दुर्दशा होगी !"

ये सब बातें वेणीदा ने मुझे बाद में बताई थीं, और बताई थी नाटक की रात की नेपथ्य-कथा। मैं तो प्रेक्षागृह में बैठा था। पर्दे की ओट में क्या हुआ था, वेणीदा के बताए बिना मुझे पता ही नहीं चलता।

उस रात केशव दत्त ने थोड़ी-सी पी रखी थी। मुंह से शराब की बू आ रही थी। पर अभिनय में कोई कसर नहीं थी। पराई स्त्री को उसके पति के सामने ही घर में डाल लेने वाले, चाय की दुकान की आड़ में भले घर की कुमारी कन्याओं के अपहरण की व्यवस्था करने वाले, जिसकी उपेक्षा करके उसकी प्रेमिका दुकान के एक नौजवान ग्राहक से प्रेम की पेंगें बढ़ा रही है, ऐसे करालीचरण के चरित्र को केशव दत्त ने मंच पर जीवित कर दिया था। उसके साथ ही चरित्रहीना, चंचल रूपसी के 'रोल' में मालती ने भी गज़ब का अभिनय किया था। दोनों ने मिलकर नाटक में जान फूंक दी थी। पर गड़बड़ हुई नेपथ्य में।

नाटक के अंकों के बीच केशव दत्त मालती के आगे-पीछे घूम रहा था। किसी बहाने से लड़कियों के ग्रीन-रूम में भी घुस पड़ा और मालती से उलझने लगा। वेणीदा को यह अखर रहा था, पर शांति बनाए रखने की खातिर वे भी कुछ नहीं बोले। पर बड़ा काण्ड हुआ, नाटक के ड्रॉप सीन के बाद। मालती को स्टेज के एक तरफ पाकर केशव दत्त उसपर टूट पड़ा, बांहों में जकड़कर उसके चुंबन पर चुंबन लेने लगा। मालती चीखकर उसके चेहरे को दूर हटाने की कोशिश करने लगी। इसी सब में उसके नाखूनों से केशव दत्त के गाल छिल गए। खून बह निकला। वेणीदा वगैरह ने आकर उन्हें अलग किया। मालती फफक-फफक कर रोने लगी।

केशव ने व्यंग्य से कहा, 'ईऽऽस ! क्या कहने सती-साध्वी के ! यह ले अपने चुंबन की कीमत !" कहते-कहते उसने जेब से कुछ नोट निकालकर मालती के सामने फेंक दिए।

"असभ्य ! जानवर कहीं का !" मालती फुंकार उठी, "जूती की नोक पर रखती हूं तेरे रुपयों को !"

इतना कहकर मालती धड़धड़ाती हुई चली गई, मेकअप उतारने के लिए भी नहीं रुकी। आखिर वेणीदा को ही उसके कपड़े पहुंचाने उसके घर जाना पड़ा। मालती उनसे मिली तक नहीं। इसके बाद पता नहीं किसने अकेले या कुछ साथियों को लेकर, केशव दत्त को अकेले में पाकर उसके सिर पर लोहे की छड़ का ऐसा वार किया कि उसे लगभग सात

दिन अस्पताल में बिताने पड़े।

वही मालती मित्र अभियोग लगा रही है कि मैंने उसका घर तोड़ दिया है।

उसके घर का मामला भला मुझे क्या मालूम! वेणीदा ने भी मुझे कभी कुछ नहीं बताया। और मुझे भी कुछ जानने का कौतूहल क्यों हो? कितनी ही लड़कियां क्लब के नाटकों में भाग लेने आती हैं। मुझे कहां समय है कि सबके घर की जानकारी लेता फिरूं? पर केशव दत्त की बातों से कुछ-कुछ अंदाज जरूर मिला था।

अस्पताल में केशव को देखने मैं गया था—मुलाकात वाले समय में, कुछ सेब और संतरे लेकर। अस्पताल सियालदह के पास था। वह एमरजेन्सी वार्ड में भर्ती था। पलंगों की क्तार में केशव जरा मुश्किल से ही मिला। उसके सिर और हाथ पर पट्टी बंधी थी। हमलावरों ने लोहे का रॉड उसके सिर का निशाना लगाकर मारा था। उसने हाथ से वार रोकना चाहा। फलस्वरूप सिर और हाथ दोनों ही घायल हो गए, पर चोट गहरी नहीं लगी। रोज की तरह ऑफिस से लौटते हुए घर की गली में वह घुसा ही था कि धुंधलके में किसीने हमला कर दिया। पता नहीं, हमलावर एक ही था या अधिक, पर लपककर रॉड चलाई गई। केशव ने सिर एक ओर झुकाकर हाथ उठाया। चोट का वजन हाथ सह गया। सिर पर चोट लगी, पर हल्की। हमलावर रफूचक्कर हो गया। केशव चीख मारकर गिर पड़ा। आस-पास के लोग दौड़े आए, रिक्शे में डाल फटउसे अस्पताल ले गए। इलाज जल्दी हो गया इसलिए तकलीफ बढ़ नहीं पाई।

"किसी पर शक है तुम्हें?" मैंने पूछा।

"क्या कहूं?" केशव ने कहा, "गुंडागर्दी आजकल वैसे ही इतनी बढ़ी हुई है। पर मुझे लगता है, इसमें उस छोकरी का हाथ है।"

"किसका? मालती का!"

"और नहीं तो किसका? बाजारू औरत है साली। मुहल्ले के दादा लोग उसके गार्जियन हैं। एक साला तो उस दिन आकर धमका ही गया था। उन्हीं में से होगा कोई।"

"थाने में रपट लिखवाई ?"

"हत्, कौन ये सब झंझट मोल ले ! कोर्ट-कचहरी की भाग-दौड़ करते रहो फिर !"

"तुम्हारा खयाल है, इस वारदात के पीछे मालती मित्र है ?"

"क्या कहा जा सकता है ? एक तरफ तो साली छुईमुई बनती है, मानो मर्द के छूने से ही सतीत्व नष्ट हो जाएगा, और दूसरी तरफ चरित्र-हीन रूपसी के रोल में कैसा अभिनय किया था ? अंदर कुछ रस न हो तो उस रोल में कोई ऐसा अभिनय कर सकता है ?"

"उस रस को चखने की कोशिश में ही तुमने कैसा उपद्रव खड़ा करवा दिया था !"

"वाकई । छोकरी एकदम मानो फन उठाकर फुफकारने लगी । ठीक है, मैं भी देख लूंगा । केशव दत्त ने ढेर लड़कियों को चराया है । एक दिन इसका बदला मैं लेकर रहूंगा ।"

"पर ये भी तो हो सकता है कि इस हमले के पीछे मालती का हाथ न हो । खुद तुमने कहा है कि गुण्डागर्दी आजकल बेतरह बढ़ी हुई है ।"

"बात तो ठीक है," केशव ने कहा, "अभी मेरा दिमाग ठीक से काम नहीं कर रहा है । जरा ठीक हो लूं, फिर खुद ही खोजबीन करूंगा ।"

केशव ने खोजबीन की या नहीं, यह जानने की फिर मुझे फुरसत नहीं मिली । हां, एक दिन बात-बात में वेणीदा ने जरूर कहा था, "क्या लड़की थी ! कैसी अद्भुत अभिनय प्रतिभा थी मालती मित्र में, और देखो, वही ब्याह करके असमय ही एमेच्योर थियेटर से रिटायर हो गई ।"

"अच्छा ! सच ?"

"सोलह आने सच !" वेणीदा ने कहा, "इस बार एक विदेशी नाटक करने का इरादा था । एकदम एब्स्ट्रैक्ट नाटक का पक्का अनुवाद था । उसके लिए मालती का पता लगाने उसके घर गया था । वहां सुना कि ब्याहकर ससुराल चली गई है ।"

"जरूर लव-मैरिज होगी," मैंने कहा, "किसी हैसियत वाले आदमी

से प्रेम चल रहा होगा, शादी-वादी सब तय हो चुकी होगी, इसीलिए सतीत्व की इतनी चिंता थी। क्या हाल किया केशव दत्त का !"

"अरे नहीं ऽ ऽ," वेणीदा बोल उठे, "प्रेम-वेम नहीं था कुछ। मां-बाप ने तय किया था रिश्ता। लड़का भी ठेठ गांव का है, किसान। डायमण्ड हार्बर के आस-पास कहीं खेती-बाड़ी करता है। खासी जगह-ज़मीन है। गाय-बैल, सब हैं। शादी में नगद रुपये तो लिए ही, दहेज में एक नई साइकिल भी ली है।" ठठाकर हंसने लगे वेणीदा, "ज़रा कल्पना करो, तुम्हारी रूपसी रानी एक किसान की कमर को बांहों में बांधे, साइकिल के कैरियर पर तिरछी बैठी सनसनाती चली जा रही हैं। हम्बारव का पार्श्व-संगीत बज रहा है, और वे किसी गड्ढे-गड़ैया के किनारे बैठी, किसान महाशय के गले से लिपटी मधुर-मधुर प्रेम-गुंजन कर रही हैं। वाह वा ! क्या ड्रामा है ! किसान की बहू ! ना, ना, आजकल के दर्शक इस तरह की कहानियां पसंद नहीं करते, नहीं तो भाई तुम्हीं से कह देता इस थीम पर एक नाटक लिखने को।"

"पर वेणीदा, आपको इतनी बातें पता कैसे चलीं ? शादी का न्यौता मिला था क्या ?"

"ना रे भाई, मुझसे पहचान ही कितने दिन की थी ? उन लोगों के बारे में खास कुछ मुझे मालूम भी नहीं है। नये नाटक में मालती को लेने के इरादे से उसके घर गया था। उसके पिता ही बकर-बकर कर सब बता गए।"

"पर केशव तो कह रहा था कि वह बाज़ारू औरत है।"

"क्या पता भाई। मैं तो बस नाटक कराता हूं। कौन-सा शादी-ब्याह करना है जो कुल-गोत्र का पता लगाने बैठूं। देखने से तो शरीफ घराना ही लगता था। पिता का नाम हारू मित्र था—उसीने सारी बातें बताईं। आदमी कंजूस लगा। दहेज में अंटी ढीली करनी पड़ी थी ना, उसीकी चोट अभी तक कसक रही है। उसी दुख में सब बता गया मुझे।"

"आपको पता था कि मालती की शादी तय हो गई है ?"

"कैसे पता होगा ? उससे तो सिर्फ रिहर्सल में संबंधित बातें ही होती थीं। और फिर इधर-उधर की बातें खोदना मेरा स्वभाव भी नहीं

तुम्हारा केशव दत्त नहीं हूं।—पर शादी अचानक ही हुई।"
"दुनिया में क्या लोगों की कमी है, जो मालती ने एक किसान से ह किया ?"
"जेण्टलमैन फारमर है भई। खास पढ़ा-लिखा तो नहीं है, पर खेती-ड़ी का अच्छा ज्ञान है। आजकल उसीमें तो दाम हैं भाई, नहीं तो हम लोगों की तरह कलम-घिसाई से भला कितना जुटता है ?"
"मालती शहर से गांव में जाकर निभा सकेगी ? इस संबंध से उसने आपत्ति नहीं की ? वह कोई नन्ही-मुन्नी तो है नहीं कि मां-बाप के अनुसार चलने पर मजबूर हो।"
"अरे, उसने खुद यह संबंध स्वीकार किया है। उसके पिता हारू मित्र की बिलकुल भी इच्छा नहीं थी कि लड़की गांव में सड़ने जाए, पर वह तो मालती ने ही ज़िद पकड़ ली कि विवाह वहीं करेगी। हारू मित्र दुनियादार आदमी है। लड़की अभिनय अच्छा करती है, इसमें नाम भी कमाया है। थोड़ा-बहुत नाचना-गाना भी आता है। बाप की इच्छा थी कि अभी शादी न हो, वह इसी लाइन में रहे। क्या पता, आगे चलकर भाग्य प्रसन्न हो, किसी सिने-नवाब की नज़र पड़े और लड़की फिल्मस्टार ही बन जाए। पर मालती ने ही पिता की आशाओं पर पानी फेर दिया। इस रिश्ते के आते ही उसने ब्याह करने का हठ पकड़ लिया। शादी करके गांव चली गई और उसका निश्चय है कि अब शहर नहीं लौटेगी। बाप अब पछता रहा है—क्या उसे किसान की बहुरिया बनाने के लिए ही पैसे खर्च करके रहीम उस्ताद को रखा था गाना सिखाने के लिए ? व्यर्थ ही पैसे खर्च करके नाच की तालीम दिलवाई थी ?"
मैंने कहा, "मालती को दूल्हा तो ज़रूर पसंद आया है। नहीं तो शहर की मौज-मस्ती, नाच-गाना-नाटक वगैरह की चकाचौंध भूल लक्ष्मी बहू बनकर गांव क्यों जाती भला ?"
"हारू मित्र बता रहा था कि जमाई देखने में बुरा नहीं है। रंग धूप में जलकर काला पड़ा हुआ है, पर चेहरा एकदम कृष्ण कन्हैया जैसा।"
"इस युग के राधा-कृष्ण की जोड़ी जंचेगी खूब," मैंने कहा "मालती-सुन्दरी गोधन की परिचर्या करेगी, उसका प्रियत

किल की घंटी बजाएगा। ननद का भय भी नहीं। आखिर अग्नि की साक्षी में किया गया विवाह ठहरा, कोई अवैध प्रणय तो होगा नहीं। ईश्वर करे वे लोग सुखी हों।"

"ऐसा ही कहो भैया," वेणीदा ने कहा, "लड़की मुझे बहुत ही अच्छी लगी है। योग्यता है उसमें, तेज भी है। मैंने तो अपनी आंखों से देखा है ना, उस केशव के दिए कड़क नोटों पर किस तरह लात मारकर चली गई। इस लाइन में हर कोई अपने को संभालकर नहीं चल सकता, पर मालती से थोड़े-से दिनों के परिचय में ही ऐसा लगता है कि वह उस तरह की लड़की है ही नहीं। सच, सुखी हो वह। मुझे दुख बस इतना ही है कि एक जन्मजात कलाकार दर्प-से जलकर बुझ गया।"

सुखी हों, सच ही सुखी हों, यही तो मैंने और वेणीदा ने चाहा था। फिर भी मालती भिन्न अभियोग लगा रही थी—मेरी ओर से चेष्टा के अभाव के कारण ही उसका घर टूट गया।

मैंने मालती से कहा, "मैंने तो चाहा था कि तुम विवाह करके सुखी होओ। खबर मुझे वेणीदा ने सुनाई थी, उनकी भी यही कामना थी।"

"पर वह हुआ कहां ?" मालती दीर्घश्वास दबाकर बोली, "मेरा सुखी घरौंदा बिखर गया। आप अगर थोड़ी-सी भी चेष्टा करते तो वह जुड़ सकता था।"

"तुम फिर मुझे दोष दे रही हो मालती। पर सच, मुझे तो समझ में ही नहीं आ रहा है, तुम्हारा घर तोड़ने में मेरा हाथ कहां है ?"

मालती होंठों पर मुस्कान लाकर बोली, "आपको झूनू दासी बनाम सहदेव दास का मुकदमा याद है ?"

"क्यों नहीं," मैंने कहा, 'मैंने ही तो सहदेव की तरफ से बचाव किया था। पर तुम्हारा इस मुकदमे से क्या संबंध ?"

मालती ने कहा, "मैं ही झूनू दासी हूं। मालती मेरा औपचारिक नाम है, घर का नाम तो झूनू ही है। सहदेव दास मेरे ही पति···" वह कुछ रुककर बोली, "थे।"

मुकदमा था रेस्टिट्यूशन ऑफ कंजूगल राइट्स का, अर्थात् पत्नी ने अदालत के मार्फत पति के साथ रहने का अधिकार वापस पाना चाहा था। पर पति स्वयं उस अधिकार को अस्वीकार कर रहा था। सहदेव मेरा मुवक्किल था। पर वह मुकदमा मैंने लड़ा नहीं। मेरे ही कहने पर सहदेव मुकदमा दूसरे वकील के पास ले गया था। बाद में फैसला क्या हुआ, इसकी कोई खोज-खबर मैंने नहीं रखी।

सहदेव का बड़ा भाई नकुल दास मेरे मुकदमे के कागजात लेकर आया था। नकुल मेरे मित्र बैरिस्टर संजित दत्तगुप्त का ड्राइवर था। संजित के साथ मैं कितनी ही बार घर लौटा हूं, नकुल गाड़ी चलाता रहा है। ड्राइवर होने पर भी नकुल खानदानी आदमी दिखाई देता था, साथ ही चुस्त और चालाक। कुछ फुसफुसाहट सुनी थी कि उसका चाल-चलन कुछ ऐसा ही है। निषिद्ध मुहल्लों में आते-जाते उसे देखा गया है। पर उसके निजी मामलों में नाक घुसाने की किसे पड़ी थी? मुझे देखते ही उसके चेहरे पर अभ्यर्थना की मुस्कान दौड़ जाती। आगे आकर, दोनों हाथ जोड़कर प्रणाम करता। बड़ा मेहरबान था।

एक दोपहर अचानक ही वह मेरे दफ्तर में हाजिर हुआ। साथ में एक सुवेश भद्र युवक था। रंग उसका बेहद काला था—नकुल से भी इक्कीस ही होगा—पर मुखाकृति अत्यंत सुंदर थी, मानो कसौटी के पत्थर की तराशी हुई कृष्णमूर्ति।

"क्या बात है नकुल?" मैंने पूछा।

"हुजूर, बिना इजाजत के ही कमरे में आ गया," नकुल ने कहा, "बैरे से पता चला कि आप अकेले ही हैं। इसीलिए एक गोपनीय काम के लिए आपकी शरण ली है।"

"ठीक है, ठीक है, बैठो," मैंने कहा।

"नहीं हुजूर, आपके सामने मैं कैसे बैठ सकता हूं?" नकुल ने कहा "आपकी इजाजत हो तो मेरा भाई सहदेव बैठ सकता है।"

"कह रहा हूं ना, तुम दोनों ही बैठो। खड़े-खड़े कहीं काम की बातें होती हैं?"

दोनों भाई अत्यंत विनीत भाव से कुर्सियों पर बैठ गए। नकुल ने

मुकदमे से संबंधित एक कागज निकाला। मैंने पढ़ा—एक अर्जी थी। अदालत के उल्लेख और मुकदमे के नंबर के बाद वादी-प्रतिवादी के नाम-पते दिए गए थे—श्रीमती झूनू दासी, साकिन कलकत्ता, पांच नंबर विपिन यश लेन, बनाम श्री सहदेव दास, साकिन गांव मुरला, थाना हरिपुर, जिला चौबीस परगना।

वादिनी की अर्जी का मुद्दा था कि कलकत्ता के उक्त पते पर प्रतिवादी के साथ उसका कानूनन विवाह हुआ था। उस विवाह की कलकत्ता में रजिस्ट्री भी हुई थी। वादिनी प्रतिवादी की विवाहिता स्त्री के तौर पर उसके साथ उक्त गांव में रहने लगी थी। पति-पत्नी के रूप में दोनों सबसे अंत में कलकत्ता वाले पते पर एक साथ रहे थे। पर बाद में प्रतिवादी ने अन्यायपूर्वक वादिनी का त्याग कर दिया। वादिनी पति के साथ रहने की इच्छुक है, और इसके लिए तैयार भी है। पति के साथ रहने का आग्रह भी उसने किया है, पर प्रतिवादी ने इनकार कर दिया है। इसलिए वादिनी अदालत में दांपत्य अधिकार की पुनर्प्रतिष्ठा के लिए आवेदन कर रही है, इत्यादि।

अर्जी में पेचीदा या उलझा हुआ कुछ भी नहीं था, पर उसे लिखा था एक प्रतिष्ठित वकील ने, जिनका कानूनी ज्ञान तो जबर्दस्त था ही, दक्षिणा भी तगड़ी थी। अगर अर्जी मामूली होती तो पहली ही बार में इतने बड़े वकील की फीस भरने की जरूरत नहीं थी। वादिनी मुकदमे में शुरू से ही खासा खर्च रही थी।

"हूं:" मैंने कहा, "नकुल, मुकदमे की अर्जी तो सीधी-साफ है। अब इसका क्या जवाब देना है ?"

"वही तो आपको बता रहा हूं सर," नकुल ने कहा, "इस मुकदमे को लड़ने की जिम्मेदारी आपको लेनी पड़ेगी। मेरा सगा भाई है, हुजूर। सीधा-सादा आदमी है, खेती-बाड़ी करता है। ठीक-ठाक गिरस्ती चला ले जाता है। ज़ादा खर्चा करने की हैसियत नहीं है सर। फीस के मामले में कुछ मेहरबानी रखिएगा।"

"वह सब बाद में देखा जाएगा," मैंने कहा, "पर जवाब लिखाने की भी तो फीस लगेगी।"

"उसकी फिकर मत कीजिए सर," नकुल ने कहा, "मेरे साहब ने कहा है कि आप अगर केस लेने को तैयार हों तो वे बिना फीस के हमारा रिटेन स्टेटमेण्ट तैयार कर देंगे। बाद में अगर जरूरत पड़ी तो वे हमारी तरफ से अदालत में भी खड़े होंगे।"

"ये तो अच्छी बात है," मैंने कहा, "अब बताओ, जवाब का मुद्दा क्या है?"

"फ्रॉड, सर," नकुल ने कहा, "ये शादी धोखे से हुई है। मेरे भाई को ठग लिया गया है?"

"क्या मतलब ! तुम लोगों को क्या कुछ भी पता नहीं था ? क्या लड़की बदल दी गई है ?"

"नहीं हुजूर। शादी उसीके साथ हुई है," नकुल ने कहा, "पर असली परिचय दबाकर। हारू मित्र की बेटी झूनू मित्र वगैरह सुनकर हमने समझा था कि लड़की शरीफ खानदान की होगी। पर बाद में पता चला कि उसकी मां चकलेवाली है—मोयरापट्टी की प्रसिद्ध बिंदी बाड़ी वाली। छः-सात बदनाम मकानों की मालकिन है वह, कुछ-एक दर्जन लड़कियां उसकी ताबेदार हैं। यह सब पता लगने के बाद क्या ऐसी लड़की को घर में रखा जा सकता है ?"

सहदेव अब तक चुप ही बैठा था। अब वह झिझकता-झिझकता कुछ बोला। उसकी आवाज़ भी नरम थी। वह बोला, "लड़की का कोई दोष नहीं है सर, पर आखिर समाज में रहना है। आप लोगों के शहरों में थोड़ा-बहुत चलता है, पर गांवों में अगर खबर जरा भी फैली तो मुसीबत हो जाती है।"

नकुल लज्जित होकर बोला, "माफ कीजिएगा सर, यही बात हो गई है। गांव में बात फैल गई है। छोटे-छोटे बच्चे-बच्चियां भी गा-गाकर चिढ़ाते हैं—खानगी की बेटी, खानगी का दमाद !"

"हूं," मैंने कहा, "शादी के पहले तुम लोगों ने ठीक से पता नहीं लगाया था ?"

सहदेव चुप रहा। नकुल मानो कुछ निगलता हुआ-सा बोला, "पूछ-ताछ करने पर तो कुछ पता ही नहीं लगा था सर। पता यही लगा था कि

हारु मित्र की लड़की है, विपिन यश लेन में रहती है, पढ़ी-लिखी है, नाच-गाना भी आता है, सुना है बाबू लोगों के साथ नाटकों वगैरह में भी हिस्सा लेती है। ये तो हमें मालूम हो नहीं था कि वह बाड़ीवाली की लड़की है। यानी—हमें कोई शक ही नहीं हुआ। और फिर शादी भी तो चटपट ही हो गई।"

नकुल के बात करने का ढंग बहुत सरल नहीं जान पड़ा। मामला ठीक तरह से मेरी समझ में नहीं आया। बात निकालने के लिए मैं जिरह करने लगा, "तुम कहते हो, पता नहीं चला। लेकिन सोयरापट्टी की प्रसिद्ध बाड़ीवाली की लड़की के बारे में मुहल्ले में कोई नहीं जाने, यह तो हो नहीं सकता। तुम मुहल्लेवालों से पूछ-ताछ कर सकते थे!"

"यह तो बड़ी गलती हो गई सर," नकुल ने कहा, "लगा कि सबध अच्छा है, एकदम मित्र कायथ। हमारी जात जरा नीची है।"

"इसीसे तुम्हें शक होना चाहिए था," मैंने कहा, "कायथ अचानक ही अपनी बेटी नीची जात में ब्याहने को तैयार हो जाए तो इसके पीछे जरूर कोई रहस्य होना चाहिए।"

"हम लोगों को क्या आपकी तरह कानून आता है सर!" नकुल ने कहा, "उन लोगों ने बड़े भारी दहेज का लालच दिया तो हम लोग भी तैयार हो गए।"

अब सहदेव बोल उठा, "सच्ची बात कहूं सर, पहले दादा ने ही उससे ब्याह करना चाहा था, वहां घरजमाई बनकर रहने को भी तैयार था, पर लड़की ही राजी नहीं हुई।"

"क्यों? नकुल में क्या बुराई है?"

नकुल चिढ़कर बोला, "लड़की का मिजाज ही कुछ टेढ़ा है सर। कहती है ड्राइवर से ब्याह नहीं करेगी। अरे! बाड़ीवाली की छोकरी का मिजाज तो देखो!"

"इसका मतलब, तुम्हें पता था कि वह बाड़ीवाली की लड़की है! सब कुछ जानते-बूझते यह विवाह हुआ है।"

पकड़े जाने पर नकुल हंस पड़ा। सिर खुजाता हुआ बोला, "आपकी जिरह से कहां जीतूंगा सर। सच ही कहता हूं, मुझे मालूम था। पर मेरे

भाई को पता नहीं था। मैंने देखा, ऐसा मालदार रिश्ता हाथ से निकला जा रहा है, इसलिए भाई के साथ मामला चला दिया। भाई को उसने नापसंद नहीं किया।"

मैं कुछ चिंतित होकर बोला, "इसीसे तो फ्रॉड की डिफेंस कुछ कमजोर हो रही है। जिरह के आगे तुम्हारी इस कहानी का टिकना मुश्किल है।"

"पर इधर हम लोग गांव में जो नहीं टिक पा रहे हैं," नकुल ने कहा "कस के लड़ना होगा, इस शादी को खतम करना ही होगा। मेरी वजह से ही इतना झंझट उठ खड़ा हुआ है। मैं भाई की दूसरी शादी करूंगा।"

सहदेव ने कहा, "मैं और शादी करना नहीं चाहता सर ! पर उसे लेकर गांव में रहा भी नहीं जा रहा है। इसीलिए…"

"इसीलिए ब्याही पत्नी को त्याग दोगे?" मैंने कहा, "शहर में रहो।"

"त्यागना तो नहीं चाहता सर, पर…" सहदेव ने कहा, "और कोई चारा नहीं रहा, इसीलिए ऐसा कर रहा हूं। बीवी के लिए पुरखों की माटी कैसे छोड़ दूं? वहां तो छोटे-छोटे बच्चे भी गा-गाकर चिढ़ाते हैं—खानगी का जमाई।"

"तुम क्या सच ही अपनी बीवी का असली परिचय नहीं जानते थे?" मैंने पूछा।

"कालीमाता की सौगंध, सर, मैं नहीं जानता था," सहदेव ने कहा, "दादा ने संबंध तय किया और मैं चुपचाप ब्याह करके बहू को घर ले आया।"

"इसीलिए तो, नकुल," मैंने कहा, "मामला कुछ उलझा हुआ है। बहुत-कुछ तो गवाही पर ही निर्भर करता है। अभी से यह कह सकना कठिन है कि जज साहब किसका विश्वास करेंगे। वह पक्ष अभी से पूरी तैयारी से सब काम कर रहा है; वकील भी बड़ा ही किया है। आखिर तक मुकदमे का क्या पता क्या रुख हो?"

"आप ये कागज-पत्तर रखिए," नकुल ने कहा, "एकबार मेरे साहब के साथ बात कर लीजिएगा। एकबार लड़ देखता हूं, फिर तो भाग्य की

बात है।"

मैंने पूछा, "और भी कुछ कागजात हैं ?"

"कैसे कागजात ?" नकुल ने पूछा।

"जैसे यही, मुकदमे से संबंधित चिट्ठियां वगैरह।"

"वकील की चिट्ठी है, और हम लोगों का जवाब।"

"इसके अलावा ?"

सहदेव कुछ झेंपकर बोला, "कुछ-एक चिट्ठिया है, सर। उसने मुझे लिखी थी। पर वे क्या किसी काम की होंगी ?"

"शरमा मत," नकुल ने कहा, "डॉक्टर और वकील से कुछ नहीं छिपाना चाहिए। चिट्ठिया हुजूर को दे दे, क्या पता मुकदमे मे काम आए।"

"मैं साथ तो नही लाया," सहदेव ने कहा, "बाद मे ला दूंगा।"

"अच्छी बात है," मैंने कहा, "जवाब देने के लिए कितने दिन का समय है?" फिर कागज देखकर बोला,"नही, अभी भी काफी समय है। सहदेव, तुम वकालतनामे पर दस्तखत कर दो।"

नकुल ने कहा, "मैं रिश्तेदार का काम निपटा लेता हू। स्टैम्प वगैरह के लिए कुछ रुपये भी जमा कर जाता हू।"

आखिर तक हुआ यह कि सजित दत्तगुप्त ने जवाब लिख दिया और मैंने प्रतिवादी सहदेव की तरफ से वह अदालत मे फाइल कर दिया। पर शुरू से ही मुझे मानो तसल्ली नही थी। मुकदमे की सफलता के सबध मे भी मुझे यथेष्ट संदेह था। इस संदेह का कारण था, पति को लिखे गए झूनू दासी के प्रेमपत्र। दत्तगुप्त ने कहा, "ये चिट्ठिया दबा जाओ। इन्हें पढ़कर जज साहब जरूर प्लेंटिफ के पक्ष मे ही डिग्री देंगे, यह किसी भी तरह रोका नहीं जा सकेगा।"

मोयरापट्टी की बिंदी बड़ीवाली को मैं पहचानता हू। विध्यवासिनी दासी उर्फ विध्यवासिनी मित्र निषिद्ध मुहल्ले की एक सुप्रतिष्ठिता नेत्री है। बहुत मे चकलों की वह लोडी या फिर किरायेदार है। उसके अधीन बहुत-सी

वेश्याएं अपनी रोज़ी कमाती हैं। विंदी मां या विंदी दी बहुत-सी अभागिनियों की गुरु-मां है। हारू मित्र के साथ उसका सच ही विवाह हुआ था या नहीं, मुझे नहीं पता, पर वे पति-पत्नी के रूप में रह रहे थे। विपिन यश लेन ठीक निषिद्ध पल्ली के बीच में नहीं है, कुछ बाहर है। उनके घर का रहन-सहन भी शरीफाना था। हारू मित्र घर का स्वामी था और विंध्यवासिनी का रक्षक भी। पृथ्वी के इस आदिमतम व्यवसाय को संभालना अकेली औरत के बस का काम नहीं है। गुण्डे-बदमाश हैं, थाना-पुलिस है, कोर्ट कचहरी भी है—कौन इन सब झमेलों को संभाले ? इसीलिए एक रक्षक की ज़रूरत होती है। हारू इन सब कामों में खूब पुख्ता है। गुण्डे-बदमाशों पर वह काबू रखता है, दारोगा-सिपाहियों के साथ उसका मेल-मिलाप है, वकील-मुख्तार उसके लिए अनजाने नहीं हैं। मोयरापट्टी के इलाके में मित्र-दम्पति का खासा रौब है। इनके साथ मेरा भी अच्छा परिचय है। पर मालती मित्र उर्फ झूनू दासी विंध्यवासिनी की बेटी है, यह मुझे पहले पता नहीं था। वेणीदा ने हारू मित्र का नाम लिया, तब भी ख्याल नहीं आया।

चुनाव के सिलसिले में मैं कुछ-एक बार उनके दरवाज़े पर गया था। गणतन्त्र बहुत-से स्तरों के लोगों को पास ला देता है। गणिका होने के नाते ही किसी को दूर नहीं रखा जा सकता। मतदाता सूची में किसी-किसी सड़क पर असंख्य ऐसी लड़कियों के नाम मिलते हैं, जिनके वोट हैं। उन पर निर्भर पुरुषों की संख्या भी कम नहीं होती। चुनाव के लिए सामयिक रूप से उनमें भी राजनैतिक संगठन तैयार करना पड़ता है। चुनाव के पहले और बाद में भी कुछ संपर्क रखना ही पड़ता है—गण-संयोग की खातिर गणिका संयोग—हां, केवल राजनैतिक कारणों से। अगर कोई इसके भी आगे जाए, तो रोकनेवाला कौन है ?

विंध्यवासिनी अर्थात् विंदी दी चुनाव में विशेष सहायता देती है। देखने-भालने में वह भारी-भरकम है। अपनी उमर में वह अच्छी सुंदर थी। अब मोटी हो गई है। चौड़े लाल किनारे की सफेद साड़ी पहने, सिर ढके, ललाट पर रुपये के बराबर सिंदूरी टीका लगाए जब वह गजेन्द्र गति से मुहल्ले के काली-मंदिर में फूल-मिठाई चढ़ा आती है, तब कौन

उसे भले घर की गृहिणी समझने की भूल नहीं करेगा ? उसका व्यवहार भी संयत तथा भद्र है, बातचीत भी शालीन। पर आवाज कुछ खनखनाती-सी है। बिंदी बाड़ीवाली के प्रभाव का सबसे बड़ा कारण है, उसका व्यक्तित्व। कुल मिलाकर वह निषिद्ध मुहल्ले की लीडर है। उसे अलग छोड़कर उस इलाके में किसी भी सार्वजनिक पूजा-पर्व, यात्रा-नौटंकी, उत्सव, राजनैतिक सभा-समिति आदि का आयोजन संभव ही नहीं है। पुलिस का अत्याचार या धर-पकड़ होने पर बिंदी बाड़ीवाली ही पहला कदम उठाती है, बाड़ीवालियों और लड़कियों की सभा बुलाती है, प्रस्ताव पास कराती है, उच्च अधिकारियों के पास अर्जियां देती है, डेपुटेशन का नेतृत्व करती है। तूफान या बाढ़ की स्थिति में चंदा इकट्ठा करना हो, तो भी बिंदी पीछे नहीं रहती। खुद तो चंदे में मोटी रकम देती ही है, कुछ पुरुष-स्त्रियों को जुटाकर गली-गली, घर-घर घूमकर, रुपया-पैसा, पुराने कपड़े, दाल-चावल आदि इकट्ठे करती है; इन सबका हिसाब रखती है, फिर इकट्ठी की हुई चीजें रामकृष्ण मिशन या भारतसेवा-श्रमसंघ में पहुंचाकर रसीद भी ले आती है। लड़कियों पर कोई मुसीबत आए तो भी बिंदी मां हाथ खोलकर मदद करती है। पर उन्हें कहीं भी कोई गलत काम करते देखती है तो उसका रूप ही बदल जाता है। दिन हो या रात, खरीदार फंसाने के लिए लड़कियां सजधज कर गली के मुहाने या घर के दरवाजे पर खड़ी रहती हैं, आपस में हंसी-मसखरी करती हैं। पर रास्ता चलते किसी व्यक्ति के साथ वे अभद्र व्यवहार करें, तो बिंदी के शासन में उनकी निष्कृति नहीं है—भले ही वे लड़कियां उसके अपने चकलों की हों, या किसी और बाड़ीवाली के। बिंदी ऐसी बातों को लेकर शोर मचा ही देती है, 'भले घरों के लड़के इस मुहल्ले में आते हैं, हमारे धन्न भाग ! यहां बेचाल चलोगी तो शरीफ लोग क्यों आएंगे भला ? पुलिस का झगड़ा-झंझट बढ़ जाएगा। तब मुसीबत में पड़कर—बिंदी को, बिंदी मां—। थाना-पुलिस, कोर्ट-कचहरी की दौड़-भाग कराने के लिए, अपना दरद दिखाकर मन पिघलाने की कोशिश करती घूमोगी। इससे तो अच्छा है, झंझट से दूर ही रहा जाए। बिलल्लापन करोगी, तो मरोगी। आखिर में रोजी-रोजगार ही मुश्किल हो जाएगा। खुद तो मरोगी ही, औरों को भी

मारेगी।' विंदी का जीवन-दर्शन बहुत यथार्थवादी है।

विंदी का गणतन्त्र भी यथार्थवादी है। वह कभी एक दल का समर्थन करती है, कभी दूसरे दल का। हिसाब करके देखती है, कौन-से दल की मदद करने से उसका या उसके मुहल्ले का भला होगा। परिणाम-स्वरूप सभी दल विंदी की खुशामद करते हैं, उसे अपने पक्ष में खींच लाना चाहते हैं। विंदी चुनाव के पहले तक अपना मनोभाव स्पष्ट व्यक्त नहीं करती।

विंध्यवासिनी का अभ्युत्थान कैसे हुआ, इसका इतिहास मुझे ज्ञात नहीं है। जानने का समय भी मुझे नहीं था, पर मुकदमे के सिलसिले में कुछ खोजबीन करनी पड़ी। इस प्रभावशालिनी प्रौढ़ा बाड़ीवाली के अतीत की कहानी स्वयं उसके अतिरिक्त शायद बहुत कम लोग ही जानते हैं। मेरी जांच-पड़ताल खास आगे नहीं बढ़ सकी। फिर भी इतना मानना पड़ा कि विपिन यश लेन में जैसे भद्र परिवेश में शरीफाना ढंग से विंध्य-वासिनी की छोटी-सी गृहस्थी चल रही थी, उससे सहदेव दास जैसे ग्रामीण कृषिजीवी युवक का धोखा खा जाना कोई आश्चर्य की बात नहीं थी।

हां, उसके बड़े भाई नकुल की बात अलग है। वह वर्जित मुहल्ले में जाता-आता रहता था। विंध्यवासिनी का बैकग्राउण्ड भी उसे भली प्रकार पता था। सब जानते-सुनते उसने विंदी बाड़ीवाली की बेटी से विवाह करना चाहा था, पर लड़की ने ही उसे ठुकरा दिया। आखिर नकुल ने अपने सीधे-सादे भाई के साथ उस लड़की का ब्याह तय कर दिया।

मालती या झूनू के बारे में जितना मुझे पता लग सका, वह यह है—वह बेहद कठोर अनुशासन में पली थी। मां बाड़ीवाली हुई तो क्या हुआ, लड़की के मामलों में खूब तेज नजर रखती थी। मालती पुरसुन्दरी बालिका विद्यालय में नियमित रूप से पढ़ने जाती थी। नवीं कक्षा तक वह पढ़ी। फिर पढ़ाई छोड़ दी। वेणीदा ने तो पहले ही बताया था, उसने नाच के स्कूल में नाच सीखा है, उस्ताद से गाना। शौकिया रंगमंच से वह स्वयं ही जुड़ गई थी। इस मामले में उसकी मां ने बहुत आपत्ति की थी, पर मालती मानी नहीं। रुपये-पैसे का उसे अभाव नहीं था, पर खुद

अभिनय करके वह जो कुछ कमाती थी, उससे उसे बहुत खुशी होती थी।

ये सब बातें बताते नकुल दास ने कहा, "विश्वास कीजिए सर, बाड़ी-वाली की लड़की हुई तो क्या हुआ, झूनू खरी लड़की है। कोई पाप नहीं है उसमें। कम-से-कम लड़की के बारे में मैंने अपने भाई को नहीं छला है।"

"तब तुम लोग उसे त्याग क्यों रहे हो ?" मैंने कहा, "घर की बहू को घर लौटा ले जाओ। बात खत्म करो।"

"यह हो नहीं सकता सर," नकुल बोला, "अब सारी बात खुल गई है। गांव में रहा नहीं जा सकता।"

"...विश्वास करो, मैं निष्पाप हूं," मालती ने अपने पत्र में लिखा था, "फिर तुम मुझे त्याग क्योंकर रहे हो ? यह सच है कि मेरी मां का चरित्र आज छिपा नहीं है। हमने छिपाना चाहा भी नहीं था। तुम्हारे भैया, मेरे जेठजी तो सभी कुछ जानते थे। उन्होंने अगर तुम्हें बतलाया नहीं तो क्या ये मेरा अपराध है ? सुहागरात को स्वयं मैंने तुम्हें सब कुछ बतला दिया था। बोलो, तब तो तुमने मुझे दोषी नहीं माना था ! मुझे बांहों में बांधकर कान में कहा था, 'वह सब भूल जाओ झूनू, ये सब बातें किसी को मत बताना; पंछी को भी पता न चले।' इसका यही तो अर्थ होता है ना, कि *तुमने मुझे क्षमा कर दिया था! तुमने मुझे ग्रहण किया था,* प्यार-सुहाग से भर दिया था। इसी का गर्व है मुझे। पर आज मेरे प्राणों के देवता कहां हैं ? मुझे क्यों भूल गए वह ? मुझे क्यों छोड़ दिया है ? आखिर क्यों, क्यों, क्यों ? क्या अपराध किया है मैंने ?..."

एक और पत्र में मालती ने लिखा था, "हाथ कांप रहे हैं, फिर भी तुम्हें लिख रही हूं, क्योंकि ये बातें तुम्हारे सामने कहने का मुझमें साहस नहीं है, न होगा। तुम्हारे भैया ने मुझसे ब्याह करना चाहा था, पर मैं ही तैयार नहीं हुई। इसलिए नहीं कि वे बैरिस्टर साहब के यहां ड्राइवरी करते हैं। अगर कोई सही रास्ते पर चलकर कमाता है, भले ही ड्राइवरी

करके—तो मैं उससे घृणा क्यों करूंगी ? पर वे गलत रास्ते पर पड़े हुए हैं। शहर में रहते हैं; हमारे मुहल्ले में उनका आना-जाना लगा ही रहता है। मेरी मां के चकले की कई लड़कियों के साथ भी उन्होंने कितनी ही रातें बिताई हैं। ये बात मुझे प्रसाददा से पता चली थी। तुम्हारे भैया चरित्रहीन हैं, इसीलिए मैंने उनसे व्याह करना नहीं चाहा था। मैं चाहती थी महादेव जैसा पति—जिसे लेकर मैं अपना घर बनाऊं, जो मेरे अतिरिक्त और किसी को न चाहे। हम दोनों एक-दूसरे के होकर ही रहें। पर तुम्हारे भैया वैसे आदमी नहीं हैं। जिस दिन मेरे साथ विवाह का प्रस्ताव उन्होंने रखा, वह रात भी उन्होंने मातंगिनी के साथ बिताई थी। खुद मातंगिनी ने मुझे बताया है। वह मेरी मां की किरायेदार है।तुम्हारे भैया ने डींग मारते हुए उससे कहा था, 'मेरी अच्छी तरह से खातिर-तवज्जो कर। पता है, मैं तुम सबका मालिक बनने जा रहा हूं। मैं तेरी बाड़ीवाली का दामाद बनने जा रहा हूं, उसकी बेटी झूनू से व्याह करके। सास मुझे राजकुमारी और आधा राज्य देगी। तब तुम लोगों का मालिक बनूंगा मैं।' मातंगिनी मेरे पास आकर सारी बातें बता गई, तुम्हारे भैया के लिए मेरे मन में जहर भर गई। मैंने मां से कहा, 'हरगिज़ नहीं, मैं इस ड्राइवर से किसी भी हालत में शादी नहीं कर सकूंगी। तुम्हें पसंद हो, तो तुम उसे ड्राइवर रख लो, पर मैं उसे दामाद नहीं बनने दूंगी।' मां ने भी खूब गाली-गलौज की—'मुंहजली, अभागी—।' जाने क्या-क्या कहा ! पर मैं अपनी जिद पर अड़ी रही। आखिर मां ने बाबा से सलाह की। तुम्हारे साथ संबंध हुआ। तुम्हारे भैया ने ही संबंध करवाया। मां ने कहा, 'करमजली की नजरें ऊंची हैं। ड्राइवर से व्याह नहीं करेगी, पर किसान को पसंद करेगी !' सुनो जरा मां की बात। खुद मां भी तो किसान की बेटी हैं। नाना किसान थे। मेदिनीपुर में काफी जगह-ज़मीन थी उनकी। अपने हाथों से हल चलाते थे। मैंने भी बचपन में उनकी गोद में चढ़कर बैलों की पूंछ मरोड़ी है। तुम खेती-बारी करते हो, सुनकर पुरानी बातें याद हो गईं। प्रसाददा को भेजकर सारी बातों का पता लगवाया। प्रसाददा मुहल्ले के नाते मेरे भैया हैं—छवि बाड़ीवाली के बेटे। बचपन से उनका हमारे घर आना-जाना

है। मुझे बहन की तरह मानते हैं। भाईदूज पर मैं उन्हें टीका करती हूं। मुझे आख की पुतली बनाकर रखते हैं। कोई मुझसे बुरा व्यवहार करता है तो वे उसकी खबर ले लेते हैं। उन्ही प्रसाददा से तुम्हारे बारे मे पता लगाने को कहा। घर पर किसी को भी पता नहीं चला। प्रसाददा को मैंने पैसे दिए। वे चुपचाप तुम्हारे गाव में गए। लौटकर बोले, 'अरी झूनू, तेरा दूल्हा तो बिलकुल महादेव है,बस भोलानाथ।' मैं भी तो यही चाहती थी। मुहल्ले के शिवमंदिर मे मैंने भी तो बचपन से ही फूल-बेलपत्र चढ़ाए हैं; शिवरात्रि पर उपवास किया है, शिव जैसा वर मांगा है। अब मेरी उमा-तपस्या सार्थक हुई थी। मैंने मां से कहा, 'यहा ब्याह करने को तैयार हूं।' मा ने कहा, 'क्या कर रही है ? तू एक गवई किसान का घर सभालेगी ? बहुत तकलीफ होगी तुझे। मैं यह नही होने दूंगी। लड़के को मैं घरजमाई बनाकर रखूगी।' मैंने बिगड़कर कहा, 'कभी नही। तुम्हारा जमाई घरजमाई बनने क्यो जाएगा ? उसके क्या घरबार नही है ? उसके पास जगह-ज़मीन है, गाय-बछड़े हैं, मैं कर सकूगी उसकी गृहस्थी।' मां चिढ़ कर बोली, 'लड़की के मिजाज समझ मे नही आते। शहर की लड़की है, जहां नल घुमाते ही पानी मिलता है, स्विच दबाते ही रोशनी। नाच-गान, सिनेमा-थियेटर, सभी सुख हैं। ये सब छोड़कर लड़की देहात मे रहने जाएगी। पोखर मे नहाकर, भीगी साड़ी लपेटकर घर लौटना, घड़े में भर-भर कर पानी लाना, गोबर लीपना, गाय की सानी-पानी— थू !' मुझसे रहा नही गया, बोली, 'मा, तुम्हारे पिता, मेरे नाना भी तो किसान थे।' मां झूठमूठ गुस्सा करके बोली, 'मर अभागी ! तेरी हिम्मत तो कम नहीं है। विदी बाड़ीवाली के आगे बाप का नाम धरती है। और कोई होती तो मैं उसका मुंह झुलस देती।' कहते-कहते मा की आखो से दो आसू ढुलक पडे। मुझे कलेजे से लगाकर बोली, 'वे पुरानी बातें अब मत याद दिलाया कर चिटिया। वह सब खतम हो गया है। इस जगह ब्याह करके अगर तू सुखी होती है, तो मैं आपत्ति नही करूगी। पर मेरे मरने के बाद इन घर-मकानो की देख-भाल कौन करेगा ?' मैंने कहा, 'तुम जिसे भी चाहो, सब दे जाना मां, मुझे कुछ नही चाहिए। पाप का अन्न बहुत खाया है, अब जरा प्रायश्चित करना चाहती हूं।' मा नाराज नही हुई, केवल

बोली, 'हाय रे जरा देखो ! पाप-पुन्न का न्याय करने की अकल किसने दी है तुझे ? देवताओं के राजा इन्दर भी उरवसी, रंभा, मेनका के साथ विहार नहीं करते थे ? देवता करें तो लीला, और मानुस करे तो पाप ? लोग जांगर (श्रम) के बल पर रुपया कमाते हैं, हम भी जांगर के बल पर कमाई करती हैं। इसमें पाप-पुन्न की कौन-सी बात है ? घर-बार से दूर ये कितने, गरीब-दुखी अभागे दो पैसा देकर कम-से-कम कुछ समय के लिए शरीर का सुख खरीद लेते हैं । किसी का क्या जाता है इससे ? मानुस शराब, गांजा, भांग चढ़ाता है; चोरी, डकैती, राहजनी, खूनखराबी करता है; चीज़ों में मिलावट करके आदमियों को मारता है, हम क्या इससे भी खराब काम कर रही हैं ?' मुझसे रहा नहीं गया, बोली, 'तुम कुछ भी कहो मां, यह पाप है—पाप, पाप, पाप । लड़कियां शरीर बेचकर पैसे कमाएं इससे बढ़कर और कौन-सा पाप होगा, मां ?' मां बोली, 'तू तो मजाक करती है बिट्टो । शरीर तो कितने लोग बेच रहे हैं—रिक्शावाला रिक्शा खींचता है, ड्राइवर बस-मोटर चलाता है, किसान खेत में खून-पसीना बहाता है, ये सब भी तो एक तरह से देह बेचना ही है। वे लोग कोई पाप नहीं करते और हम करें तो पापिन हैं?' मैं ज़ोर देकर बोली, 'फिर भी यह पाप है । मैं पाप की इस आबहवा से छुटकारा पाना चाहती हूं ।' इसीलिए तो मैं ब्याह करके घर बसाने के लिए व्याकुल थी । तुम्हारे घर आकर मैंने मानों शांति की सांस ली । मुझे लगा, मानो तुम्हारी पोखर-तलैया में नहाकर मेरे सब पाप धुल गए हों । तुम्हारी पुआल-छाई झोंपड़ी में की हवा मानो मन के भीतर की सब दुर्गन्ध उड़ा ले गई...।"

बहुत लम्बे-लम्बे पत्र थे । बात खूब सुलझाकर लिख सकती है मालती—कितने छोटे-मोटे विषय, कितनी मीठी-मीठी प्यारी बातें । पत्रों में मालती ने पति के आगे अपने को बिलकुल खोल दिया था । उसने तो सोचा नहीं था कि ये पत्र किसी और के हाथों में पड़ेंगे, या लोभी कानों की तृप्ति के लिए अदालत में असंख्य लोगों के सामने उच्चस्वर में पढ़े जाएंगे । पर दत्तगुप्त ने ठीक कहा है, ये चिट्ठियां

अदालत में दाखिल की गई तो सहदेव का केस तो खतम ही हो जाएगा। जज साहब 'फ्रॉड' की कहानी पर रंचमात्र भी विश्वास नही करेंगे। हां, हो सकता है कि इन पत्रों को पेश करने की मांग वादिनी की तरफ से उठे। पर वह झंझट तो सहदेव के अस्वीकार कर देने से ही खतम हो जाएगा। पति को लिखे प्रेमपत्रों की कोई कॉपी थोड़े ही रखता है?

कम से कम सहदेव ने तो अपने पत्रों की कोई नकल रखी नहीं थी। इसीलिए यह जानने का मेरे पास कोई उपाय नही था कि उसने क्या लिखा था। पर मालती के पत्र से सहदेव की दो-एक बातों का पता चला। सहदेव खुद भी खास पढ़ा-लिखा नहीं था। गांव के स्कूल में सातवीं तक पढ़कर ही वह खेती-वारी के काम में जुट गया था। उसका बड़ा भाई गांव में पड़े रहना नहीं चाहता था। शहर आकर एक मोटर ट्रेनिंग स्कूल से गाड़ी चलाना सीखकर उसने लाइसेन्स ले लिया। इधर-उधर काम करके हाथ जमाने के बाद सजित दत्तगुप्त के यहां बहाल हुआ। पर सहदेव गांव में ही रह गया। अपने हाथों से खेती आबाद करके बाजार में काफी मुनाफा भी कमाता रहा। उसकी हैसियत भी अच्छी थी। मोटे भात और कपड़ों का अभाव नहीं था। बगीचे की तरकारियां, पोखर की मछलियां, खेत का धान—सब मिला कर वह संपन्न कहा जा सकता था। वह गांव की राजनीति में भी भाग लेता था। चुनावों में आगे रहता था; क्षेत्रीय पंचायत में सफलता के साथ निर्वाचित होता था; कृषि-मेले का आयोजन करता था; जात्रा (नौटंकी) आदि की व्यवस्था करता था; घुमतू सिनेमा भी बुलवाता था, कठपुतली के खेलों का भी इंतजाम करता था। कुल मिलाकर, सहदेव ग्राम अंचल का एक विशिष्ट व्यक्ति था, एक सुसंस्कृत कृषिजीवी।

वही सहदेव जब कलकत्ता की लड़की को ब्याहकर ले गया, तो गांव में हलचल मच गई थी। सब बहुत खुश थे। ग्रामवधुएं दल बांधकर नई बहू को देखने आई थीं। शहरी लड़की जैसे कोई नखरे नही, मिजाज नहीं; सुंदर शिष्ट रूप, मीठी हंसी, गाने में आवाज और भी मीठी। मुहल्ले की मौसी-बुआ, अपने-पराए, सबने, इच्छा से हो या अनिच्छा से, सहदेव और नई बहू की प्रशंसा की झड़ी लगा दी थी। सहदेव भी

बहुत खुश था। फिर पता नहीं कैसे, असली बात खुल गई। मालती के जीवन में अंधेरा घिर आया।

एक और पत्र में मालती ने लिखा था, "···तुमने लिखा है, प्रजारंजन के लिए राम ने सीता देवी को निष्पाप जानते हुए भी त्यागा था। पर मैं कहती हूं, यह तो त्रेतायुग नहीं है, तुम भी राम नहीं, न मैं सीता हूं। कौन से अपराध के कारण तुम मेरा त्याग करोगे ? एक बार 'संध्यातारा क्लब' में 'मृच्छकटिक' का अभिनय हुआ था—संस्कृत नहीं, ज्योतिरीन्द्र ठाकुर का अनुवाद—कुछ काट-छांट कर। मैं वसंतसेना बनी थी। उस गणिका को दरिद्र ब्राह्मण चारुदत्त से प्रेम हो गया था। राजा के साले के प्रलोभन और धमकियों की उपेक्षा करके भी वह चारुदत्त के प्रति अनुरक्त थी। वधभूमि से प्रेमी का उद्धार करके उसने चारुदत्त से ब्याह किया था। गणिकावृत्ति त्यागकर वह ब्राह्मण की घरनी बनी थी। राजा ने भी इसकी स्वीकृति दे दी थी। तुमने शायद वह नाटक पढ़ा नहीं है। पढ़ते तो तुम्हें अवश्य ही वह बहुत अच्छा लगता। मुझे तो लगा था। अभिनय के समय मैंने अपने आपको वसंतसेना में खो दिया था। मैं अभिनय कहां कर रही थी—मानो अपने मन की छुपी बात को लोगों के आगे प्रकट करती चल रही थी। बहुत प्रशंसा पाई, तालियां बजीं। पर बस, इतना ही। गणिका को घरनी बनाकर भी उस युग के ब्राह्मण चारुदत्त की निंदा नहीं हुई थी, पर इस युग की गणिका की कन्या को भी क्या घर-वर नहीं मिलेगा ? मिलेंगे केवल सामाजिक निंदा, लोक-लज्जा, कुत्सा, घृणा, अत्याचार ? मैं तो वेश्या नहीं हूं। ठीक है, मेरी मां वेश्या थी, अभी भी चकले चलाकर धन कमाती है—उसी अन्न से मैं पली हूं। पर मुझे यह भी पता है कि समाज में वेश्या का अन्न खा कर भी कितने ही बड़े-बड़े आदमी शान से सिर ऊंचा किए खड़े हैं। यह जरूर है कि इस मामले को वे चुपचाप ही निपटाना चाहते हैं। अगर कोई कलंक रहता भी है, तो ऊपर खोल चढ़ाकर उस कलंक को ढांके रखना चाहते हैं। उन सब बड़े-बड़े आदमियों के नाम मैं फाश कर दूं तो अनेकों के ऊंचे सिर झुक जाएंगे। पर वेश्या समाज का भी एक नीति-शास्त्र होता है। खरीदार बाबुओं को वे मुसीबत में डालना नहीं चाहतीं।

चोरों की भी एक नैतिकता होती है। पर जो लोग बाहर शराफत का खोल चढ़ाकर भीतर कदाचार करते हैं, क्या वे और भी बड़े अपराधी नहीं हैं ? वे क्या पाखण्ड के बल पर पार हो जाएंगे ? मैं गणिका नहीं हूं। विश्वास करो, मेरा चरित्र निष्कलुष है, मैंने शराफत से ज़िंदगी बिताई है, पर क्या लोकनिंदा के भय से तुम मुझे त्याग दोगे ? तुमने कहा है, 'तुम मुझे प्यार करते हो।' मैं भी तुमसे प्रेम करती हूं। विवाह के बाद ही यह प्रेम हुआ है। फिर भी हमारा धर्मविवाह क्या विफल हो जाएगा ? जिस विवाह में प्रेम नहीं होता, जिस मिलन के पीछे केवल भय, लोभ या कामना रहती है, वही तो असली वेश्यावृत्ति है।…"

नकुल-सहदेव एक दिन मुझे अपने गांव ले गए। नकुल गांव की जमीन-जायदाद बेचकर शहर में ही रहता था। सहदेव ने अपनी पैतृक भूमि रखी ही नहीं, बढ़ाई भी। वहीं उसके आत्मीय-स्वजन भी थे। मुझे ले जाने का उपलक्ष्य था—गांव के जूनियर हाईस्कूल का पारितोषिक-वितरण। सहदेव उस स्कूल का सेक्रेटरी था। उसकी इच्छा थी, स्कूल दसवीं श्रेणी तक हो जाए और उसे अधिकारियों की स्वीकृति भी मिल जाए। उसका कहना था कि मेरे जाने से गांववालों का उत्साह बढ़ेगा। चंदा इकट्ठा करने का काम भी आसान हो जाएगा। दो कमरे आधे तैयार हुए पड़े हैं। उन पर छत डाली जाएगी। वहां दो क्लासें लग सकती हैं। मेरी सिफारिश से अधिकारियों के साथ संपर्क करना भी उनके लिए संभव होगा। जगह कलकत्ता से कोई पचीस मील दूर थी। उन लोगों के अनुरोध पर मैं तैयार हो गया। उनलोगों ने निमन्त्रण-पत्र छपवाए। जिनमें मेरा नाम बड़े-बड़े अक्षरों में छापा गया।

नकुल ने उस दिन संजित दत्तगुप्त से छुट्टी लेकर मेरी कार चलाई। कार पुरानी थी। नकुल बेहद 'रैश ड्राइव' करता है। बार-बार मुझे उसे टोकना पड़ रहा था। ठाकुरपुकुर तक भीड़ थी। उसके बाद सड़क काफी खाली थी। डायमण्ड हार्बर रोड से होकर गंतव्य स्थान तक पहुंचने में हमें घण्टे-भर से कुछ अधिक लगा। नकुल मुझे लेकर सुबह ही

चल पड़ा था। सहदेव नहीं आया था। वह फंक्शन की व्यवस्था करने में व्यस्त था। बात तय हो गई थी कि मैं सुबह ही चल दूंगा। खाना उनके यहां खाऊंगा। दोपहर को विश्राम करके शाम को सभा का काम निवटाकर रात के पहले ही घर लौट आऊंगा। एक दिन की सैर ही सही।

गांव वस के रास्ते पर था। खासा बड़ा गांव। बिजली अभी भी नहीं आई थी, पर शहर के साथ संपर्क काफी था। कितने ही लोग बस में 'डेली पैसेंजरी' करते थे। किसान साग-भाजी लेकर जाते थे, मछुए मछली ले जाकर बेहाला के बाज़ार में बेच आते थे। वातावरण वहां का अच्छा था।

वह हाट का दिन था। हफ्ते में दो बार हाट लगता था। सुबह से ही अच्छी भीड़ होने लगी थी। रास्ते के किनारे पर ही छोटा-सा बाज़ार था। उसके पास की खुली जगह में ही हाट लगता था।

गाड़ी नकुल-सहदेव के घर तक नहीं जा सकती थी। इसीलिए हाट के पास थोड़ी-सी खुली जगह में गाड़ी पार्क करके, खिड़कियों के शीशे चढ़ाकर लॉक करके नकुल ने चाय की दुकान के मालिक को उसकी ज़िम्मेवारी सौंप दी। फिर हम दोनों पैदल ही पगडण्डी से होकर उनके घर गए। कुछ कौतूहली बच्चे भी हमारे पीछे हो लिए।

पेड़-पौधों से छाए एक आंगन के चारों तरफ कमरे बने हुए थे। दो कमरे पक्के थे और उनपर खपरैल की छत थी, बाकी सब कच्चे। गोठ में दो-तीन गाय-बछड़े थे। रंग-बिरंगी देशी मुर्गियां चारा चुगती घूम रही थीं। बड़े-से पोखर में कुछ बत्तखें थीं। धान के दो बखार भी दिखाई दिए। कलकत्ता के पास ही ऐसा ग्राम्य वातावरण बड़ा भला लग रहा था।

सहदेव ने बढ़कर अगवानी की। मेरा स्वागत किस प्रकार करे, यह मानो उसकी समझ में ही नहीं आ रहा था। हरा नारियल स्वयं काट कर उसने मीठा जल पिलाया। आंगन में एक चबूतरे पर तख्त था, जिस पर सुन्दर दरी बिछी थी और दो मसनदें। वहीं मैं बैठा।

सहदेव ने मुझसे स्नान के लिए पूछा। गर्व से उसने कहा, "पोखर

में नहीं नहाना पड़ेगा, सर। एक पक्का स्नानघर और सेनिटरी पाखाना अभी ही बनवाया है। पानी ट्यूबवेल से आता है। नहाने से किसी बीमारी का डर भी नहीं है।"

मैंने कहा, "मैं नहा आया हूं," और मन ही मन सोचा कि 'शहरी बीवी की सुविधा के लिए ही शायद ये सब नल-पाखाने का इन्तजाम हुआ है। पर गृहिणीहीन घर सूना-सूना लग रहा था। इधर-उधर दो-एक ग्राम-रमणियां नजर जरूर आईं, पर वे शायद रसोई में व्यस्त थीं। नकुल तो मुझे सहदेव के हाथों सौंपकर ही सरक गया था। सहदेव अकेला ही मेरे सत्कार में जुटा था। मैंने कहा, "सहदेव, मेरी वजह से अपने काम का हर्जा मत करना। मैं मजे में हूं। तुम्हें कोई और काम हो तो चले जाओ।"

"हां,जाऊंगा सर," सहदेव ने कहा ,"घर खाली है। दादा भी कहीं गए हैं। फक्शन के सिलसिले में मेरा कुछ काम बाकी है। यहां अकेले-अकेले आपको अच्छा लगेगा ?"

"मेरी चिन्ता मत करो तुम।"

"सर, अगर बुरा न मानें तो कहूं," सहदेव ने कहा,"मेरे पास अलमारी भरकर बंगला किताबें हैं। तब तक आप दो-चार किताबें उलट-पलटकर देखें।"

"कहां हैं किताबें ?"

"आपके लिए तो ये सब कुछ भी नहीं है, पर···"

आंगन पार करके सहदेव मुझे एक पक्के बने हुए कमरे में ले गया। यह उसका शयन-गृह था। नया, आधुनिक फर्नीचर था—सुन्दर, जुड़े हुए पलंग, जिनपर आकर्षक बेड कवर लगे हुए थे; ड्रेसिंग टेबल, 'जिस पर आधुनिक प्रसाधन-सामग्री सजाकर रखी हुई थी; शीशा जड़ी हुई स्टील की अलमारी; कपड़े टांगने का रैक; एक अलमारी भरकर किताबें; खिड़कियों पर रंगीन पर्दे। कमरे की छत खपरैल की थी, पर फैशनेबल फर्नीचर के कारण उसका अपना एक ऐसा वैशिष्ट्य नजर आ रहा था, जो गांव के लिए अप्रत्याशित था।

सहदेव सलज्ज भाव से बोला,"ये सब दहेज है। सोच रहा हूं, सब

ौटा दूं। देखूं, मुकदमे का नतीजा क्या होता है !"

मैं मुस्कराकर बोला, "लौटाओगे क्यों? बल्कि अपनी पत्नी को ही स ले आओ। घर की लक्ष्मी घर लौट आए।"

पता नहीं, जज साहब क्या फैसला देंगे, पर मालती के पत्र पढ़कर पहले ही उसके पक्ष में फैसला दे चुका था। मन में सोचा कि इस फैसले ही मेरे मुवक्किल का कल्याण है।

सहदेव बोला, "मैं तो यही सोच रहा हूं, सर। लेकिन..."

"अच्छा, ये सब बातें बाद में होंगी," मैंने कहा, "तुम अब अपने काम पर जाओ। मैं इस अलमारी की किताबें देखता हूं।"

अलमारी का ताला खोलकर सहदेव चला गया। कमरे में मैं अकेला रह गया। किताबें बंद करके मैं कमरे में लगी तस्वीरें देखने लगा।

यह शयन-कक्ष मानो मालती-मय था। दीवारों पर उसकी तस्वीरें थीं, श्रृंगार-मेज पर उसकी तस्वीरें थीं अलग-अलग पोज में। मालती की तस्वीर इसके पहले कभी नहीं देखी थी, आग्रह के साथ देखने लगा। वह सुन्दर नहीं थी, पर चेहरे पर एक अनोखी रौनक थी। तस्वीरों में ओंठ काफी भरे-भरे लग रहे थे, नाक भी मोटी थी, पर आंखें उज्ज्वल थीं— प्राणवंत। दो-एक ग्रुप फोटो भी थे, शायद शौकिया थियेटर-दलों के मेकअप के बावजूद उसे पहचानने में असुविधा नहीं हुई। श्रृंगार-मेज पर अकेली मालती की तस्वीर के अलावा एक तस्वीर वर-वधू की भी दिखाई दी। सहदेव खूब जंच रहा था। काला था तो क्या हुआ उसके नाक-नक्श बहुत ही सुन्दर थे।

मेरे पास समय बहुत था। आराम से किताबों को उलटने-पल लगा। तरह-तरह की किताबें थीं। कुछ शादी में उपहार के रूप मिली थीं, कुछ पर झूनू दासी का नाम लिखा हुआ था। कुछ किताबें न की थीं जिनपर बड़े-बड़े अक्षरों में मालती मित्र का नाम लिखा हुआ काम में आने के कारण ये किताबें कुछ मैली भी हो गई थीं; उनमें कहीं कुछ काट-कूट भी दिखाई दे रही थी। अरे, मेरे नाटक 'उ की भी एक प्रति है! समझ गया, यह मालती के व्यवहार के लिए कॉपी है। उसने ये किताबें संभाल कर रखी थीं, विवाह के

ले आई ; पर जाते समय इन्हें ले नहीं गई। यह मानो इस बात का प्रमाण है कि वह लौटकर अपने घर आना चाहती है।

किताबें उठाते-धरते ही समय बीत गया। दोपहर के खाने का ज़ोरदार आयोजन था। पेट-भर खा लेने पर नींद का नशा चढ़ने लगा। सहदेव ने अपने शयन-कक्ष में ही मेरे विश्राम की व्यवस्था की थी। —धोबी की धुली कलफदार चादर और गिलाफ। दरवाज़ा भेड़कर वह चला गया।

मुझे बड़ा अजब-अजब-सा लग रहा था। यह मालती और सहदेव के ब्याह का पलंग था। गद्दा खूब नरम था। इसी शैया पर लेटकर नव-दंपति ने प्रणय-गुंजन किया होगा,एक दूसरे को प्यार से भर दिया होगा।—यही सब आकाश-पाताल सोचते-सोचते न जाने कब मुझे नींद आ गई। अचानक एक कोलाहल से नींद टूट गई। मैं उठ बैठा, मामला समझने की कोशिश करने लगा। ज़ोर-ज़ोर से बोलने की आवाज़ें आ रही थीं —क्रुद्ध आवाज़ें। कान लगाकर सुनने की कोशिश की। नकुल-सहदेव के क्रुद्ध कंठस्वर के कुछ अंश सुनाई दिए। औरों की आवाज़ें भी थीं। बात क्या है ?

कमरे के बाहर निकलकर देखा, सहदेव एक लाठी लिए छटपटा रहा है। नकुल उसे पकड़कर रोकने की चेष्टा कर रहा है। दूर, दूसरा पक्ष लड़ाई के लिए तैयार है।

सहदेव चीख रहा था,"आज मैं खून कर दूंगा। मारकर, सिर फोड़ कर फांसी पर चढ़ जाऊंगा। इन लोगों ने समझ क्या रखा है ? बाहर से इज़्ज़तदार मेहमान आए हैं। उनका भी लिहाज नहीं ?"

विपक्ष से कोई बोला,"इज़्ज़तदार की इज़्ज़त रखने की ही तो हम कोशिश कर रहे हैं।"

पीछे से बच्चों का दल एक स्वर से चिल्ला उठा,"खानगी के दामाद, गद्दी छोड़ो, अभी छोड़ो, जल्दी छोड़ो।" सहदेव लाठी लिए, उन्हें भगाने के लिए दौड़ने को लपका। चीखकर बोला, "छोड़ो सुअर के बच्चों को मार कर खून की नदी बहा दूंगा। नहीं तो मेरा नाम सहदेव दास नहीं !"

नकुल के लिए उसे पकड़कर रोके रखना मुश्किल हो गया था।

…के लोगों के उकसाने पर बच्चों ने फिर नारे लगाने शुरू कर…
…व, अश्लील लग रहे थे ये नारे।
…और रहा नहीं गया। मैंने आवाज़ दी, "नकुल ! सहदेव!"

आवाज़ से सभी मानो चौंक उठे। सहदेव लाठी झुकाकर …आया, पीछे-पीछे नकुल। प्रतिपक्ष अचानक वहां से खिसक गया। …चिन्तित होकर पूछा, "बात क्या है नकुल ? बात क्या है …?"

सहदेव चुपचाप सिर झुकाए खड़ा रहा।

नकुल ने कहा, "गांव की दलबंदी है सर। आप तो जानते हैं, सभी …हीं पर अलग-अलग दल रहते हैं। हमारे गांव में भी हैं। हमारा विरोधी …आज के फंक्शन को बिगाड़ना चाहता है। बहुत दिन से ये लोग …ूल पर अपना अधिकार जमाना चाहते हैं, लेकिन गार्जियनों के वोटों …ी वजह से यह हो नहीं सका। अब इन्हें मौका मिला है। इस शादी के …बहाने गांव में अपनी खिचड़ी पका रहे हैं। इन्हें काफी सपोर्ट भी मिल रहा है। लड़कों को भी भड़का दिया है। स्लोगन तो आपने भी सुने हैं।"

"क्या चाहते हैं ये ?" मैंने जानना चाहा।

"ये चाहते हैं कि सहदेव अभी, आपके सामने ही सेक्रेटरी का पद छोड़ दे," नकुल ने कहा, "इसकी शादी ऐसी घृणित है कि अब ये स्कूल चलाने लायक नहीं रहा। वहां को-एजुकेशन है। लड़के-लड़की एक साथ पढ़ते हैं। इस बुरे आदर्श से वे लोग बहक जाएंगे।"

"मैं कहता हूं सर, छोड़ दूंगा सेक्रेटरी का पद," सहदेव बिफर कर बोला, "क्या रखा है उसमें ? मैं तो मास्टरों की तनखा मारकर कमाई नहीं करता, मुझे क्या फायदा है उससे ? पर लोग सुनते ही नहीं। कहते हैं, अभी इस्तीफा लिख दो, नहीं तो फंक्शन नहीं होगा।"

नकुल बोला, "उन्हें यह भी समझाया कि सहदेव ने बहू को छोड़ दिया है। अदालत में मुकदमा चल रहा है। साहब लोग हमारी तरफ से मुकदमा लड़ रहे हैं। पर वे लोग विश्वास ही नहीं करते। कहते हैं, लुक-छिप कर मियां-बीबी की चिट्ठी-चपाती चलती है। कलकत्ता में ये लो… साथ गिरस्ती भी करते हैं—ये ही सब ऊटपटांग बातें।"

"न हो फंक्शन !" मैं कुछ गरम होकर बोला, "मेरी चिंता मत करो। यहां आकर खाया-पिया, एक सैर ही हो गई। इस जमाने के देहाती समाज की नीचता भी अपनी आंखों से देख ली। मेरी खातिर तुम इस्तीफा मत देना। अगर मुकदमा लड़ना पड़े, तो मैं तो हूं।"

सहदेव कुछ आश्वस्त होकर बोला, "डर उस बात का नहीं है सर जरूरत पड़ी तो मुकदमा भी लड़ूंगा, लाठी भी पकड़ूंगा। किसान का बेटा हूं, मुझे इतनी मान-इज्जत की फिकर नहीं है। पर वह लोग गुट बनाकर स्कूल का सत्यनाश कर देंगे, यही चिन्ता है।"

"मैं कहता हूं," नकुल विज्ञ की भांति परामर्श देने लगा, "तू रेजिग्नेशन दे दे, फंक्शन में भी मत जा। सर आए हैं, प्राइज-डिस्ट्रीब्यूशन हो ले; तब इस्तीफा वापस लेकर खड़ा आएगा।"

सहदेव बोला,"ना,यह मुझसे नहीं होगा। उनकी हिम्मत बढ़ जाएगी। सिर्फ स्कूल ही नहीं, अचल-पचायत के मामले में भी मेरे पीछे लग जाएंगे। आखिर मुझे गांव से बाहर करके दम लेंगे। मैं तो लड़ूंगा।"

"बहुत अच्छे, सहदेव," मैंने कहा,"तुम्हारे फंक्शन में कितनी देर है ? चलो, चलें!"

"चलिए सर," सहदेव ने कहा, "मुझे आपकी ही चिन्ता थी। जब आपने ही बुरा नहीं माना, तो मुझे अब किसीकी परवाह नहीं। मेरा दल-बल तैयार ही है।"

हम लोग और देर न करके स्कूल की ओर चल पड़े। रास्ता धान के खेतों के बीच से गया था। दूर स्कूल के कमरे दिखाई दे रहे थे। एक बड़ा-सा पक्का कमरा था, जिसपर टीन की छत थी। बाकी कच्चे कमरे थे, पुआल से छाए हुए। पक्के कमरे पर राष्ट्रध्वज लहरा रहा था। टाट से शामियाना बनाया गया था, कागज की झण्डियों के बंदनवार लटक रहे थे। कुछ युवक लाठी लिए घूम रहे थे। सहदेव ने बताया, "वे हमारे आदमी हैं।"

सड़क पर फूल और आम के पत्तों से हमारे लिए दो स्वागत द्वार बनाए गए थे। उनमें से एक लचककर टूटा पड़ा था। सहदेव ने उस ओर इशारा किया, "बदमाशों ने इस गेट को तोड़ डाला है।"

यह बताने की अब क्या आवश्यकता है कि इस उत्तेजना के बीच पुरस्कार-वितरणी सभा ज़रा भी नहीं जम पाई। हंगामे की आशंका से उपस्थिति बहुत कम थी। शिक्षकों का आना अनिवार्य था, इसलिए वे हाज़िर थे। एक लड़की उद्‌घाटन-गीत गानेवाली थी। सुना, वह मालती से गाना सीखती थी। पर आज वह गैरहाज़िर थी।

सहदेव ने कहा, "लड़की बहुत आज्ञाकारिणी है। जरूर उसे आने नहीं दिया गया है।" एक शिक्षक ने बैठे गले से बेसुरा रवीन्द्र-गीत गाकर सभा का उद्‌घाटन किया। दूर से अनेक कण्ठों से वे गंदे स्लोगन और ज़्यादा सुनाई देने लगे। बहुत-से कृतीछात्र-छात्रा इनाम लेने आए ही नहीं थे। माइक पर बार-बार नाम पुकारे जाने पर भी वे नहीं आए। इसी बीच दो-चार ईंटें धपाधप आकर शामियाने के टाट पर गिरीं। ईंट का एक टुकड़ा शायद एक स्वयंसेवक के सिर पर लगा। चोट अधिक नहीं थी, पर रक्त बहने लगा। फर्स्ट-एड बॉक्स स्कूल में ही था। एक शिक्षक ने झटपट उसकी चिकित्सा की। इसी कारण सभा के कार्य में कुछ बाधा पड़ी। सहदेव का दल लठी लेकर हमलावरों को खदेड़ने के लिए दौड़ पड़ा। मैंने दो-चार मिनट कुछ बोलकर ही सभापति का भाषण समाप्त कर दिया। उन लोगों ने चाय की व्यवस्था की थी। मेरे मना करने पर यह इरादा छोड़ दिया गया।

अब लौटने की बारी थी। सहदेव के लाठीबंद साथियों ने अपने घेरे में ले जाकर मुझे गाड़ी पर चढ़ा दिया। सहदेव ने लज्जित होकर क्षमा मांगी। बोला, "आपको बहुत कष्ट हुआ। मुझे अंदाज भी नहीं था कि वे लोग इतनी नीचता पर उतर आएंगे; नहीं तो और भी अधिक पहरे की व्यवस्था रखता।"

मैंने कहा, "इसकी चिंता मत करो सहदेव। तुम्हारा क्या दोष है? तुमने अपनी तरफ से तो सभी कुछ किया है। अब मैं तुम्हारी स्थिति समझ पाया हूं। यह भी कि तुम मालती को वापस क्यों नहीं ला पा रहे।"

सहदेव का दल उत्साह से मेरी जिन्दाबाद के नारे लगाने लगा। दूर से वे गन्दे स्लोगन फिर हल्के-हल्के सुनाई देने लगे।

नकुल ने मेरी गाड़ी स्टार्ट की। मैंने हाथ हिलाकर उन लोगों से विदा ली। गाड़ी सड़क पर आते ही ढम् से एक ईंट का टुकड़ा ऊपर आ गिरा। गाड़ी का शीशा बाल-बाल बचा। नकुल ने दांत भींचकर हमलावरों के नाम गन्दी गालियों की झड़ी लगा दी, फिर एक्सिलरेटर दबाया। गाड़ी सर्र-से गांव छोड़कर निकल भागी।

मालती ने एक पत्र में लिखा था, "···मैंने तुम्हारे गाव के लोगों का कोई नुकसान तो नहीं किया है, बल्कि उपकार ही किया है। लड़कियां मेरे पास गाना सीखने आई हैं, लड़के कविता-पाठ सीखने। बच्चों को लेकर मैंने 'सिराजुद्दौला' नाटक करवाया था। रिहर्सल, अभिनय, साज-सज्जा, स्टेज बनवाना, सभी कुछ तो मैंने ही करवाया था। तुम्हारे स्कूल का आंगन उस दिन लोगों से भर गया था। कितने लोगों ने आकर मेरी प्रशंसा की थी, मेरे जैसी पत्नी पाने पर तुम्हें बधाई दी थी। कितनी दोपहरियों को लड़कियां मेरे पास आकर सिलाई-कढ़ाई सीखती थीं। मुझसे ही सारा सामान लेकर उन्होंने नई-नई चीजें सीखी हैं, मेरी मशीन पर सिलाई की है। रेडियो से महिलाओं के प्रोग्राम सुनकर, पत्रिकाओं में महिलाओं के पृष्ठों में देखकर मैं नए-नए पकवान बनाती थी, और तुम लोग खाकर उनकी तारीफ करते थे। वही पकवान मैंने कितनी लड़कियों को बनाने सिखाए हैं। और भी बहुत-कुछ सिखाया है—साफ-सुथरा रहना, स्वास्थ्य के साधारण नियम। अब ऐसा क्या हो गया कि रातोंरात मैं ऐसी घृणित, गंदी, अस्पृश्य, अपवित्र हो गई कि मेरे पति के घर में भी मेरी जगह नहीं रही? क्या पुरुष सभी पवित्र होते हैं? तुम्हारे भैया—अपने जेठजी की बात छोड़े दे रही हूं। वे शहर में अपनी रातें कहां-कहां बिताते हैं, उसे लेकर तो गांव में कोई आपत्ति नहीं करता? तुम लोगों की क्षेत्रीय परिषद् के सभापति बनर्जी महाशय—उन्होंने भी तो बेहाला में एक गैरजात की लड़की को रख छोड़ा है। इसके लिए उन्हें तो किसीके आगे जवाबदेही नहीं करनी पड़ती? फिर भी उन सबका जितना आक्रोश, निंदा, घृणा है, सब सिर्फ मेरे ऊपर!···"

नए नाटक का रिहर्सल शुरू हो गया था। वेणीदा के विशेष अनुरोध पर बहुत दिनों बाद क्लब में गया था। कुछ लोग रिहर्सल के लिए आए थे। एक नई अभिनेत्री आई थी। उसका चेहरा पाउडर की परतों से सफेद हो गया था, आंखों में काजल, ओंठों पर चटक रंग की लिप्स्टिक, महीन साड़ी कंधे से गिर-गिर जा रही थी और सारा शरीर अनावृत हो रहा था—उत्तुंग वक्षस्थल की गढ़न, लो-कट ऊंचे ब्लाउज़ में ऊपर से झांकता उभार, नीचे से दिखाई देते पेट पर चर्बी की तहें। इस लास्यमयी नारी को घेरकर कुछ सदस्य हंसी-मजाक कर रहे थे। उन्हींमें केशव दत्त भी था। उसने नई अभिनेत्री से मेरा परिचय करवा दिया। बदले में उसने मृदु हंसकर मुझे एक संक्षिप्त-सा नमस्कार किया। केशव ने कहा, "अनुराधा देवी के साथ हम लोगों का परिचय यदि पहले हो जाता तो ये रूपसी का पार्ट और भी अच्छा करतीं। 'कालो हरिण चोख' फिल्म देखी है ? अनुराधा देवी ने साइडरोल में जो एक्टिंग की है कि छा गई हैं। हमारे इस नाटक को ये अकेली ही जमा देंगी।"

मैंने उसका अभिनय नहीं देखा था, पर यह सोचे विना नहीं रह सका कि इसकी वेशभूषा में देह-प्रदर्शन की जैसी उदग्र इच्छा थी, मालती इस विषय में इसके सर्वथा विपरीत थी। अनुराधा को पाकर केशव मानो नवीन उत्साह से उमग रहा था।

मैंने पूछा, "केशव, तुम्हारी तबीयत अब तो ठीक है ना ?"

"कैसी लग रही है ?"

"अच्छी।"

"बिलकुल अच्छी है," केशव व्यंग्य से बोला, "मालती का गुण्डा-दल मुझे खतम नहीं कर पाया।"

"क्या मतलब ?"

"मतलब एकदम सीधा है," केशव मुझे खींचकर एक ओर ले गया। बोला, "मैंने जासूसी की है। कुछ दिन विपिन यश लेन और उसके आस-पास घूमकर सब बातें पता लगा ली हैं।"

"कौन-सी बातें ?"

"मुझे उस परसाद पाल के गिरोह वालों ने मारा था।"

"कैसे पता चला ?"

"बताया तो, जासूसी की थी," केशव तृप्त स्वर में बोला, "उस मुहल्ले की चाय की दुकान में दो-एक गुण्डों को चाय-ऑमलेट क्या खिलाए कि अंदर की खबर बाहर आ गई। परसाद पाल मालती को बहुत 'पियार' करता है। साले का एक धोबीखाना है—नाम भी भारी-भरकम है—'द ग्रेट ईस्टर्न ड्राइंग क्लीनिंग कंपनी।' पर असली काम है, सौदियों की दलाली करना। मोटी कमाई उसीसे होती है। उसके हाथों में कुछ नौजवान छोकरे हैं, उन्हींके बल पर इतना रोब जमाता है। उस दिन देखा नहीं, हमारे क्लब में आकर मुझे ही धमका गया ?"

"पर इसका प्रमाण क्या है कि उसीने यह दुष्कर्म किया है ?"

"ठीक है, खुद उसने नहीं किया है। पर लड़कों ने उसके उकसाने पर ही यह काम किया है। सुना है, मालती ने रो-धोकर परसाद पाल से जाकर शिकायत लगाई थी कि एक लुच्चे बदमाश केशव दत्त ने थियेटर के खिस्त में सबके सामने उसपर बलात्कार करने की कोशिश की थी। हरामजादे दत्त का एकतरफा फैसला हो गया। उसे सजा देने के लिए परसाद की फौज हाथ में रॉड लेकर कूद पड़ी।"

"सच, बड़ी गलत बात है," मैंने कहा, "क्या पता, खून तक हो जाता। तुमने थाने में रपट लिखाई है या नहीं ?"

"पागल हुए हो ? इन सब बातों में थाना-पुलिस करने से कोई लाभ है क्या ? गवाही कौन देता ? ऊपर से मेरे ही रुपयों का नुकसान होता। पर मैंने भी बदला ले लिया है।"

"कैसे ?"

"वह छोकरी ही तो सारे झगड़े की जड़ थी," केशव गुर्राया हुआ-सा बोला, "उसीको 'टाइट' कर दिया है। ब्याह कर भी चैन नहीं मिलेगा साली को।"

"क्या कह रहे हो ?"

"हां, फिलिम-प्रोड्यूसर होने का बहाना करके उसके बाप हारू मित्तर से जाकर मिला था। नट-चित्रम् का डायरेक्टर मालती देवी को हीरोइन

ा चाहता है। एक बार उनसे ही सीधे बात करनी जरूरी है। हारू
र ने चारा निगल लिया। बीबी के साथ सलाह की। बीबी कौन है,
है ? मोयरापट्टी की बदनाम बिंदी बाड़ीवाली। वही इस मालती
मां है। मैंने सोचा था कि औरत ऐसे ही कुलटा गिरिस्तिन होगी, पर
खता हूं, वह तो बाजार की वेश्या है। फिलिम का नाम सुनते ही हुमच
ड़ी। फिर तो उसके पेट से मालती की ससुराल का पता निकलवाने में
जरा भी देर नहीं लगी। ऊपर से चाय, समोसे, संदेश भी खा आया।"

"तुम्हारा इरादा क्या था ?"

"बदला," वह दांत निपोरकर बोला, "मैं वहां मुरलाग्राम चला गया। सहदेव दास को खोज निकालने में देर नहीं हुई। नट-चित्तम् के डायरेक्टर के रूप में अपना झूठा परिचय दिया, मालती से मिलना चाहा। पर इस आदमी ने चारा नहीं निगला। डरा-धमकाकर मुझे भगा दिया।"

"क्या कह रहे हो ? तुम्हारी चाल चली नहीं ?" मैं आश्वस्त हुआ।

"कौन कहता है, नहीं चली ?" मैं भी ताक लगाए रहा। मच्छरों ने काटा, जोंकें चढ़ आईं, मैंने उफ् तक नहीं की। छोकरी को आखिर पकड़ ही लिया। एक चौड़े किनारे की साड़ी पहने, मांग-भर सिंदूर और ललाट पर सिंदूर का टीका लगाए वह घर के पासके ट्यूबवेल से गागर भ
कर पानी ला रही थी। कौन कहेगा कि यह बिंदी बाड़ीवाली की बेटी है
परसाद पाल की प्रेयसी, ऊंचे मिजाज वाली रूपसी मालती देवी है—ह
भरा मधु, बंगवधू जल लेकर जाए घर को—मां कहने को मेरा मन
चाहा, जी चाहा प्रियतमा कहने को। वाह, कितनी जंच रही थी घ
बहू के रोल में ! छोकरी मुझे देखकर चौंक उठी, मानो पहचाना ही
हो। पर उसका फक् चेहरा देखकर मैं समझ गया, साली बिलकुल प
गई है।"

"फिर ?"

"मैंने चेलेंज करते हुए कहा, 'परसाद पाल मेरा खून क
आया था ?' उसने कहा, 'कौन परसाद पाल ? आप मुझसे यह
पूछ रहे हैं ?' मैंने कहा, 'ढोंग हो रहा है ? जैसे निरी बच्ची हो
तुम्हारा नाम लेकर परसादपाल ने मुझे धमकाया था। फिर मे

करने की कोशिश की। उसे मैं फांसी पर चढ़वा दूंगा।' बस, पर्दा खिसक गया। छोकरी रोने-रोने को हो आई, बोली, 'ना-ना, फांसी पर मत चढ़वाइएगा। उसका कोई दोष नहीं है। मैं जाकर रोई-धोई थी, तो उसके दल के लड़कों ने गुस्से में आकर आपके साथ मार-पीट कर डाली। मैं उनकी तरफ से माफी मांगती हूं।' कहते-कहते उसने गागर नीचे रखकर अचानक मेरे पैर पकड़ लिए। मैं तो बस पिघल ही गया था। पर मन की अतृप्त वासना जाग उठी। लगा, वह थियेटरवाली रूपसी मेरी आंखों के सामने ही मेरे हाथ से निकलकर नौजवान प्रेमी के हत्थे चढ़ रही है। मैंने उसके सामने अपना प्रस्ताव रखा। वह सांप की तरह फुफकार उठी, बोली, 'मुझे क्या बाजारू औरत समझा है?' मैंने कहा, 'और नहीं तो क्या?' वह बोली, 'दूर हो जाइए यहां से!' हमारी उत्तेजित आवाजें सुनकर उसका पति दौड़ा आया। मालती ने कहा, 'ये अनजान आदमी मेरा अपमान कर रहा है।' गांव का गंवार आदमी मुझे धम्-से घूसा जमा बैठा। मैं गुस्से में बोला, "खानगी के जमाई का रुआब तो देखो!" उसने जमकर मेरी मरम्मत शुरू कर दी। मेरी चीखें सुनकर गांव के लोग जमा हो गए। उन्होंने मुझे छुड़ाया, मेरा मुंह वगैरह धुलवाया। वह औरत एक बात भी नहीं बोली, मर्द को लेकर घर में घुस गई। पर गांव के लोगों ने मुझे घेर लिया, जानना चाहा, मामला क्या था। चाय की दुकान पर मुफ्त की चाय पीते-पीते मैंने उन लोगों का असली परिचय दे डाला। लोगों ने पहले तो विश्वास ही नहीं किया। मैं अपनी गांठ का पैसा खर्च करके एक मुखिया को विपिन घर लेन लाया और सारा मामला समझा दिया। बस, छोकरी की सती बनने की साध चूर-चूर हो गई।"

मैं नाराज होकर बोला, "केशव, तुम खुद नहीं जानते कि तुमने उसका कितना बड़ा सर्वनाश किया है।"

"क्यों नहीं करूं?" केशव गुस्से में गुर्राया, "उसने मेरी जान लेने की कोशिश की थी, मैं बदला न लूं?"

"झूठी बात है। उसने तुम्हारी जान लेने की कोशिश नहीं की थी। वह उस तरह की लड़की ही नहीं है।"

मेरी हार्दिकता से केशव कुछ आश्चर्यचकित हुआ। बोला, "'उफ्',

बड़ा दर्द उमड़ पड़ा है ! कितना जानते हो तुम उसे ?"

मालती के पत्र मेरे मन में कौंध गए। मैं बोला, "बहुत।"

"तुम्हें शायद उसने वकील बनाया है ?" केशव ने व्यंग्य किया।

"बिलकुल उल्टी बात," मैंने कहा, "अदालत में मैं उसके खिलाफ मुकदमा लड़ रहा हूं।"

"क्या मतलब ?"

"मालती के पति ने उसे त्याग दिया है। उसने पति के विरुद्ध नालिश की है। मैं पति की तरफ से लड़ रहा हूं।"

"अच्छी तरह से लड़ो। मैं लड़ाई के लिए और भी माल-मसाला और रसद जुटा दूंगा। ऐसी लड़की जरूर हारेगी।"

इसी समय अनुराधा हमारे बीच आ पहुंची। वह इठलाकर बोली, "आप लोग बहुत देर से मुझे नेगलेक्ट कर रहे हैं। मैं क्या इतनी अग्ली (भद्दी) हूं कि आप मेरी तरफ देखेंगे भी नहीं ?"

"कौन कहता है कि आप अग्ली हैं ?" केशव गद्गद् होकर बोला, "आप अगर अग्ली होतीं तो क्या मैं आज की रात आपको 'चिन चाउ' में डिनर के लिए इन्वाइट करता ?"

"यू आर स्वीट माइ डार्लिंग," अनुराधा पिघल गई।

एक सुबह अचानक ही विंध्यवासिनी आ पहुंची मुझसे मिलने के लिए। वही लाल किनार की सफेद साड़ी पहने, सिर पर सिंदूर का टीका। ललाट पर रुपये जितना बड़ा सिंदूर का टीका दमक रहा था। निरंतर पान खाने के कारण ओठ कुछ बदरंग-से थे। उसने सिर ढक रखा था और एक रेशमी शॉल लपेटे थी। रबर की चप्पल दरवाजे के बाहर ही खोलकर वह मेरी बैठक में घुसी। हाथ जोड़कर, सिर झुकाकर, बड़ी भक्ति से उसने मुझे प्रणाम किया। मेरे कहने पर ही वह बैठी।

मैं शिष्टाचार निभाते हुए बोला, "आइए, इतनी सुबह-सुबह कैसे भूल पड़ीं ?"

वह व्याकुल प्रार्थना-सी करती हुई बोली, "बाबू, मेरी लड़की को

बचाइए।"

"मैं क्या कर सकता हूं ?" मैंने पूछा।

"आप सभी कुछ कर सकते हैं बाबू," उसने कहा, "एक जवान जिनगानी बचा सकते हैं। मेरी बेटी को बचा लीजिए। उसने नहाना-खाना छोड़ दिया है। घर-वर की रट लगाकर मर रई है। आप जैसे भी हो, इस मुकद्दमे को खतम करा दीजिए, बाबू। आपकी जितनी वो फीस होगी, मैं खुद आकर सिरीचरनो में चढा जाऊंगी।"

"छि, छि, ये क्या कह रही हैं आप ?" मैंने प्रतिवाद किया, "मैं क्या रुपयों के लिए लड़ रहा हूं ? सहदेव का भाई नकुल मेरे दोस्त का ड्राइवर है। उसीकी खातिर मैं मुकदमा एक तरह से बिना फीस लिए ही लड़ रहा हूं।"

"आप भले आदमी हैं, सज्जन आदमी हैं," वह बोली, "अगर कोई गलती की हो, तो माफ कीजिएगा। लड़की पर दया कीजिए बाबू, जैसे बी हो मुकद्दमा खतम करवा दीजिए।"

"मैं क्या कर सकता हू ?"

"आप कहेंगे तो जमाई सुनेगा। आपको वो बोत मानता है।"

"आपलोगों का केस तो खराब नहीं है क्या होगा, कहा नहीं जा सकता। पर आपके साथ ये सब बातें करना मेरे लिए उचित नहीं है," मैंने कुछ टालते हुए कहा।

"ये क्या अदालत का काम है बाबू ? बेटी तो मेरी मुकद्दमा करना ई नईं चाहती थी। मैंने ई जोर देकर केस करवाया था, का था, केस के डर से जमाई समझौता कर लेगा। पर अब आपलोग उसके पीछे खड़े हैं, वो जमकर लड़ रा है।"

"वह लड़ कहां रहा है !" मैंने कहा, "उसने तो सिर्फ जवाब दाखिल किया है।"

"*झूठा जवाब है बाबू, सिरफ हम लोगों को हैरान करने के लिए।*"

मैंने कहा, "नकुल झूठ बोल सकता है, पर सहदेव को सच ही आप लोगों के बारे में पता नहीं था।"

"उससे क्या हुआ बाबू ? उसने मेरी लड़की को तो अपना लिया।

: । लड़की को वो अब बी चाहता है ।"
मैं कुछ वोल न सका क्योंकि विंध्यवासिनी की बात विलकुल सच
ी ।

"मैं वढ़ा-चढ़ा कर नई कै रई वावू, मेरी लड़की हीरा है । उसके
पिता वी तो ऐसे-वैसे आदमी नईं थे ।"

मुझे कौतूहल हुआ । कुछ झेंपते हुए मैंने पूछा, "क्यों, हारू वावू
उसके पिता नहीं हैं ?"

"हाय दैया, वो क्यों उसका पिता होने लगा ! वो तो अवी कुछ साल
से ई है मेरे पास । एक मज़बूत आदमी के न होने पर हमलोगों का काम
नईं चलता, इसीलिए उसे साथ रखा है । उसका नाम मेरे काम आरा
है ।"

"फिर ?" मैंने विस्मय से पूछा ।

"उसके वावा एक नामी डॉक्टर थे," विंध्यवासिनी कहती चली गई,
"नाम वताऊं तो सव पैंचान लेंगे, आप भी पैंचान लेंगे, पर नाम मैं वता-
ऊंगी नई । वो महान थे, उनको मैं वदनाम नई करूंगी । उनने मुझे सात
वरस तक रखा, पंछी तक को पता नईं चला । वो नियम से मेरे पास
आते—छुप-छुप कर । मेरे लिए अलग मकान किराए पर लिया था ।
अकेले घर में मैं राजरानी थी । इन सात सालों में मैंने उन्हें छोड़ और
किसीको नई जाना । झूनू उन्हींकी वेटी है । झूनू को कित्ता प्यार करते
थे वो । लड़की के भाग फूटे थे—इसके तीन साल की होते न होते वे गुज़र
गए । उनकी दया से ई दो रोटी खा रई हूं वावू । उनके दिए हुए रुपये
मैंने उड़ा नई दिए । उन्हीं से मकान किराया करके रोजी कमा रई हूं ।"

"वे सव वातें जाने दो," मैंने कहा, "मुकदमे में इस सवसे कुछ खा
फरक नहीं पड़ता ।"

"मैं मुकद्दमा लड़ने तो नई आई वावू," उसने कहा, "मुकद्दमा खत
करने आई हूं । उनकी वौत इच्छा थी कि लड़की को अच्छा घर-
मिले । पर मेरा जला नसीव, उनकी आखिरी इच्छा वी शायद पूरी
कर सकूंगी ।"

मुझे कुछ दया आई । मैं वोला, "सहदेव तो शायद मालती को

लेना चाहता है, पर समाज तो तैयार नहीं होगा।"

"चूल्हे मे जाए समाज !" विध्यवासिनी चिढ़कर बोली, "इस निगोड़े समाज के सर पर मेरी जूती !"

फिर कुछ दम लेकर बोली, "मैंने सब सुना है। उनके गांव में आप जैसे देवता का भी अपमान किया है लोगों ने। यहां तक कि पथराव भी किया था !"

"ऐसी हालत में क्या आपकी लड़की वहां रह सकेगी ?" मैंने पूछा।

"मैं ही क्या चाहती हूं कि वो वां उस जड़ देहात में रहे ? वो कलकत्ता मे रहेगी। जमाई भी कलकत्ता में ई रहे। मेरा घर पसंद नई हो तो अच्छे मोहल्ले में 'फलाट' किराए पर ले दूंगी। इस कलकत्ता सहर में कौन जानेगा ? कौन पैंचानेगा ?"

"आपका प्रस्ताव बुरा नहीं है," मैंने कहा, "अच्छा, मैं सहदेव से बात करके देखता हूं।"

विध्यवासिनी व्याकुल होकर बोली, "आपके जोर देकर कैते ही वो राजी हो जाएगा। आपको वो ना नई कै सकेगा। मेरी जितनी विसय-संपती है, सब मालती को ही तो मिलेगी, याने जमाई को ई मिलेगी। जमे, तो गांव की जर-जमीन वेच डाले। कीमत ही क्या होगी उसकी। उन रुपयें से कलकत्ता में ई अपना छोटा-मोटा घर खरीद सकता है वो। रुपयें कम पड़े, तो मैं दूंगी। कलकत्ते मे ई अपना घर बसाए दोनों।"

"ठीक है, मैं सहदेव से बात करता हूं।"

विध्यवासिनी और भी झुककर प्रणाम कर चली गई। कहती गई, "बहुत आस लेकर जा रई हूं बाबू, निरास मत कीजिएगा। जनम भर आपके गुन गाऊंगी।"

विध्यवासिनी की आशा मैं पूरी नहीं कर सका, उसे भी मेरे गुन गाने का अवसर नहीं मिला। सहदेव को मैंने इस प्रस्ताव की जानकारी दी, पर उसने इनकार कर दिया।

उसने कहा, "सर, यह प्रस्ताव मैं किसी भी हालत मे नहीं मान सकूंगा। दादा तो पुरखों की माटी का मोह छोड़कर कलकत्ता आ गए हैं, मुझसे यह नहीं होगा। जितना भी छोटा हो, उस घर का मोह मुझसे

छोड़ा नहीं जाएगा।"

"वह घर रहते हुए भी तो तुम शहर में रह सकते हो।"

"रह तो सकता हूं, पर फिर समाज में मुझे जगह मिलेगी ? लुक-छुप कर कितने दिन रहूंगा ? बात फिर खुल जाएगी। शहर के लोग मुंह से भले कुछ न कहें, मन ही मन निंदा करेंगे, पीठ-पीछे चर्चा करेंगे।"

"पर सहदेव, तुम तो अपनी पत्नी को अभी भी चाहते हो। अपने कमरे में अभी भी उसकी कितनी तस्वीरें टांग रखी हैं।"

"यही तो मेरा दुख है सर। उसे प्यार करने पर भी अपने समाज में खींचकर नहीं ला सका। मैं हार मानता हूं। लड़ाई में मैं हार गया हूं। देखा नहीं, आप जैसे सज्जन को भी उस दिन मेरे कारण लांछित और अपमानित होना पड़ा।"

"तुम अगर सच ही उसे प्यार करते हो, तो उसकी खातिर कुछ त्याग नहीं कर सकते ?"

सहदेव कुछ पल चुप रहा। फिर बोला, "मुझे गलत न समझिएगा सर। आप बड़े हैं, शायद मेरे मन का खयाल करके, मेरे भविष्य का खयाल करके ही मुझे यह सलाह दे रहे हैं। पर मैं, सर, मालती का त्याग कर दूंगा, उसके संग-साथ का त्याग कर दूंगा, उसके रुपये-पैसे का त्याग कर दूगा, पर समाज का त्याग नहीं कर पाऊंगा। जो गलती कर बैठा हूं, उसे सुधारूंगा। मैं सिर्फ यही मुकदमा नहीं लड़ूंगा, मैंने तय किया है, मैं मालती के खिलाफ मुकदमा दायर करूंगा, इस शादी को खतम करने के लिए।"

"तुम्हारी तरफ से वह मुकदमा मैं दायर नहीं कर सकूंगा," मैंने कहा, "बल्कि तुम ये मुकदमा भी किसी और वकील के पास ले जाओ। मैं नकुल से कह दूंगा। मुझे कोई खर्च-वर्च देने की भी जरूरत नहीं है ! तुम लोग देर मत करो, चेंज ले जाओ। तुम्हारा ये मुकदमा मैं नहीं कर सकूंगा।"

"आप नाराज हो गए सर," सहदेव बोला।

"ना, नाराज नहीं हुआ," मैंने कहा, "इस मुकदमे को लड़ने का उत्साह नहीं रहा। मैं सब कागज-पत्र तैयार करके रखूंगा, तुम्हारे नए वकील की

चिट्ठी पाते ही भेज दूंगा। उसके पहले मालती के पत्रों का यह बंडल तुम लेते जाओ। तुम्हारे मुकदमे में ये चिट्ठियां किसी काम नहीं आएंगी।"

मैंने दराज खोलकर चिट्ठियों का बंडल महदेव को सौंप दिया। चिट्ठियों में एक मधुर-सी गंध आकर मेरे नासापुटों में भर गई। यही मानो मेरी दक्षिणा थी।

पत्रों का बंडल लेकर महदेव सिर नीचा किए कमरे से निकल गया।

द्वितीय पर्व

मालती को कैसे समझाऊं कि मेरी ओर से चेष्टा के अभाव में नहीं टूटा है उसका घर। मैंने तो भरसक चेष्टा की थी, फिर भी उसे दृढ़ विश्वास है कि मैं अगर जोर डालता तो महदेव उसे सदा के लिए नहीं त्याग देता। मैंने मुकदमा छोड़कर गलत किया है। अगर मैं मुकदमा अपने हाथ में रखता तो महदेव किसी भी दशा में विवाह समाप्त करने का दावा दायर नहीं करता, और विवाह समाप्त भी नहीं होता।

मुकदमा छोड़ने के बाद मैंने मालती-महदेव की कोई खोज-खबर भी नहीं रखी थी। कुछ महीनों बाद मालती ही मेरे पास आई। पहले तो मैं उसे पहचान ही नहीं सका। उसीने सीधे अभियोग लगाया, "आप कोशिश करते तो मेरा घर नहीं टूटता। आपकी ओर से चेष्टा न होने के कारण ही मेरा घर टूटा है।"

मेरे प्रतिवाद पर उसने कान ही नहीं दिया। मालती ने आगे की जो घटनाएं बताईं, सुलझाकर रखने पर वे इस प्रकार हैं :

महदेव ने विवाह समाप्त करने के लिए मुकदमा दायर किया। मालती ने उसके विरुद्ध जवाब दाखिल किया। एकसाथ दोनों मुकदमे

चलने लगे, पर मालती के लिए यह दुर्विसह्य हो उठा। जिस पति पर उसने प्राण-मन उत्सर्ग कर दिए थे, उसीके विरुद्ध मुकदमा लड़ना उसे सहन नहीं हो रहा था। केवल विंध्यवासिनी की जिद के कारण ही वह लड़ रही थी। फिर मालती ने तय किया कि मुकदमे समाप्त करने के लिए वह स्वयं सहदेव से अनुनय-विनय करेगी। इसीलिए वह सबसे छिपाकर फिर सहदेव को पत्र लिखने लगी—अनुनय-भरे पत्र, युक्ति, तर्क, मान-अभिमान, नीति, प्रेम, कर्त्तव्य—सभी के बारे में वह लिखती। कभी-कभी उसके आंसुओं से भीगकर लिखाई अस्पष्ट हो उठती। पत्र पर पत्र लिखती गई मालती।

लेकिन पत्र पर पत्र मालती के पास वापस लौटने लगे। किसीने भी वे पत्र खोले नहीं, पढ़े नहीं; डाक-विभाग से ही वे पत्र मालती के पास वापस लौट आए। लिफाफे के ऊपर कभी लिखा रहता—एड्रेसी अन-नोन—(हो ही नहीं सकता। मुरलाग्राम में सहदेव को भला कौन नहीं जानता!) कभी लिखा होता—लेफ्ट—(अगर वह कहीं चला ही गया होता तो लिफाफे पर मालती का नाम-पता किसने लिखा? लिखावट तो मालती की खूब परिचित थी), कभी सिर्फ लिखा रहता—रिटर्न्ड टु सेण्डर। साफ था, सहदेव मालती के पत्र ले नहीं रहा है, खोल नहीं रहा है, पढ़ नहीं रहा है, फिर भी फाड़कर फेंकता भी नहीं, कृपा करके उन पत्रों को लेखिका के पास ही लौटा देता है, मानो कह रहा हो, 'तुम मुझे पत्र मत लिखा करो।'

असली बात का पता लगाने के लिए मालती प्रसाद पाल के पास गई। वही एकमात्र व्यक्ति था, जिसपर मालती को विश्वास था। विश्वास था कि वह कभी धोखा नहीं देगा। मालती ने अपने प्रसाद को मुरलाग्राम भेजा, सहदेव के बारे में पता लगाने के लिए। प्रसाद को वहां कोई भी नहीं पहचानता, सिर्फ नकुल-सहदेव को छोड़कर। प्रसाद ने लौटकर खबर दी, नकुल शहर में है, बहुत दिनों से गांव नहीं गया, परन्तु सहदेव गांव में ही मौजूद था, बहुत समय से शहर का रुख भी नहीं किया है।

मालती ने लौटी हुई चिट्ठियां प्रसाद के हाथों सहदेव के पास भिज-वाई थीं। प्रसाद सहदेव से मिला था। सहदेव ने उसका असम्मान नहीं

किया था; आदर से घर मे बैठाया था, अपने हाथों से पेड़ से कच्चा नारियल तोड़कर प्रसाद को उसका मीठा पानी पिलाया था, यहा तक कि मालती की कुशल भी पूछी थी। पर प्रसाद के द्वारा पत्र दिए जाने पर उसने बिना पढ़े ही वे लौटा दिए; फीकी-सी हंसी हंसकर बोला, "जो सब खतम ही हो गया, उसकी लकीर पीटने से लाभ क्या है दादा!" कुछ और कहने का साहस नही हुआ प्रसाद को।

सहदेव ने प्रसाद को जल्दी नही छोड़ा। दोपहर का खाना खिलाया, बहुत-सी बातें कीं—सिर्फ मालती की बातें छोड़कर। दलदल के पास वाली जमीन पर इस बार धान अच्छा हुआ है। रासायनिक खाद ठीक समय पर देने का अद्भुत परिणाम हुआ है। बी० डी० ओ० ने कहा है कि सहदेव को इस बार इस क्षेत्र के श्रेष्ठ कृषिजीवी का पुरस्कार भी मिल सकता है। लाल गाय ने एक बछड़ा दिया है। सहदेव डीप लिटर पद्धति से मुर्गी-पालन कर रहा है। अभी करीब पच्चीस चूजे हैं। स्कूल वाला झंझट खतम हो गया है। मालती के खिलाफ मुकदमे की बात सुनकर अभिभावक भी खुश है। सेक्रेटरी के चुनाव में सहदेव फिर जीत गया है। विरोधी दल हार गया है, पर वे लोग अभी मुकदमे के नतीजे का इन्तजार कर रहे हैं। अगले महीने सहदेव दस कट्ठा धानवाली जमीन खरीदेगा—इत्यादि।

यह सब सुनकर भी मालती रुकी नहीं। वह एक बार आखिरी कोशिश करके देखेगी। इसीलिए मालती किसीको बताए बगैर, चादर लपेटकर एस्प्लानेड आकर एक बस पर चढ़ गई। यह बस उसे मुरलाग्राम पहुंचा देगी। अपने साथ उसने कुछ भी सामान नहीं लिया कि किसीको संदेह हो। इसके अलावा उसके अपने कपड़े-लत्ते तो पति के घर में थे ही। उस समय शाम हो चली थी। बस में करीब दो घण्टे लगेंगे। पहुंचते-पहुंचते रात हो जाएगी। होने दो। पहचाना रास्ता है। बल्कि अंधेरा ही अच्छा रहेगा। वह लेडीज सीट पर बैठ गई। इस तरफ धुंधला अंधेरा-सा है। अच्छा ही हुआ। कोई परिचित कहीं उसे देख न ले। यह मानो उसका गुप्त अभिसार है। फिर भी वह आ रही है पति के घर।

बस में समय बीत ही नहीं रहा था। इतनी धीरे क्यों चल रही है

चलने लगे, पर मालती के लिए यह दुर्विसह्य हो उठा। जिस पति पर उसने प्राण-मन उत्सर्ग कर दिए थे, उसीके विरुद्ध मुकदमा लड़ना उसे सहन नहीं हो रहा था। केवल विंध्यवासिनी की ज़िद के कारण ही वह लड़ रही थी। फिर मालती ने तय किया कि मुकदमे समाप्त करने के लिए वह स्वयं सहदेव से अनुनय-विनय करेगी। इसीलिए वह सबसे छिपाकर फिर सहदेव को पत्र लिखने लगी—अनुनय-भरे पत्र, युक्ति, तर्क, मान-अभिमान, नीति, प्रेम, कर्त्तव्य—सभी के बारे में वह लिखती। कभी-कभी उसके आंसुओं से भीगकर लिखाई अस्पष्ट हो उठती। पत्र पर पत्र लिखती गई मालती।

लेकिन पत्र पर पत्र मालती के पास वापस लौटने लगे। किसीने भी वे पत्र खोले नहीं, पढ़े नहीं; डाक-विभाग से ही वे पत्र मालती के पास वापस लौट आए। लिफाफे के ऊपर कभी लिखा रहता—एड्रेसी अन-नोन—(हो ही नहीं सकता। मुरलाग्राम में सहदेव को भला कौन नहीं जानता !) कभी लिखा होता—लेफ्ट—(अगर वह कहीं चला ही गया होता तो लिफाफे पर मालती का नाम-पता किसने लिखा ? लिखावट तो मालती की खूब परिचित थी), कभी सिर्फ लिखा रहता—रिटर्न्ड टु सेण्डर। साफ था, सहदेव मालती के पत्र ले नहीं रहा है, खोल नहीं रहा है, पढ़नहीं रहा है, फिर भी फाड़कर फेंकता भी नहीं, कृपा करके उन पत्रों को लेखिका के पास ही लौटा देता है, मानो कह रहा हो, 'तुम मुझे पत्र मत लिखा करो।'

असली बात का पता लगाने के लिए मालती प्रसाद पाल के पास गई। वही एकमात्र व्यक्ति था, जिसपर मालती को विश्वास था। विश्वास था कि वह कभी धोखा नहीं देगा। मालती ने अपने प्रसाद को मुरलाग्राम भेजा, सहदेव के बारे में पता लगाने के लिए। प्रसाद को वहां कोई भी नहीं पहचानता, सिर्फ नकुल-सहदेव को छोड़कर। प्रसाद ने लौटकर खबर दी, नकुल शहर में है, बहुत दिनों से गांव नहीं गया, परन्तु सहदेव गांव में ही मौजूद था, बहुत समय से शहर का रुख भी नहीं किया है।

मालती ने लौटी हुई चिट्ठियां प्रसाद के हाथों सहदेव के पास भिज-वाई थीं। प्रसाद सहदेव से मिला था। सहदेव ने उसका असम्मान नहीं

किया था; आदर से घर में बैठाया था, अपने हाथों से पेड़ से कच्चा नारियल तोड़कर प्रमाद को उसका मीठा पानी पिलाया था, यहाँ तक कि मालती की कुशल भी पूछी थी। पर प्रमाद के द्वारा पत्र दिए जाने पर उसने बिना पढ़े ही वे लौटा दिए; फीकी-सी हंसी हंसकर बोला, "जो सब खतम हो ही गया, उसकी लकीर पीटने से लाभ क्या है दादा!" कुछ और कहने का साहस नहीं हुआ प्रमाद को।

सहदेव ने प्रमाद को जल्दी नहीं छोड़ा। दोपहर का खाना खिलाया, बहुत-सी बातें कीं—सिर्फ मालती की बातें छोड़कर। दलदल के पास वाली जमीन पर इस बार धान अच्छा हुआ है। रासायनिक खाद ठीक समय पर देने का अद्भुत परिणाम हुआ है। बी० डी० ओ० ने कहा है कि सहदेव को इस बार इस क्षेत्र के श्रेष्ठ कृषिजीवी का पुरस्कार भी मिल सकता है। लाल गाय ने एक बछड़ा दिया है। सहदेव डीप लिटर पद्धति से मुर्गी-पालन कर रहा है। अभी करीब पच्चीस चूज़े हैं। स्कूल वाला झंझट खतम हो गया है। मालती के खिलाफ मुकदमे की बात सुनकर अभिभावक भी खुश हैं। सेक्रेटरी के चुनाव में सहदेव फिर जीत गया है। विरोधी दल हार गया है, पर वे लोग अभी मुकदमे के नतीजे का इन्तजार कर रहे हैं। अगले महीने सहदेव दस कट्ठा धानवाली जमीन खरीदेगा—इत्यादि।

यह सब सुनकर भी मालती रुकी नहीं। वह एक बार आखिरी कोशिश करके देखेगी। इसीलिए मालती किसीको बताए बगैर, चादर लपेटकर एस्प्लानेड जाकर एक बस पर चढ़ गई। यह बस उसे मुरनाग्राम पहुंचा देगी। अपने साथ उसने कुछ भी सामान नहीं लिया कि किसीको संदेह हो। इसके अलावा उसके अपने कपड़े-लत्ते तो पति के घर में थे ही। उस समय शाम हो चली थी। बस में करीब दो घण्टे लगेंगे। पहुंचते-पहुंचते रात हो जाएगी। होने दो। पहचाना रास्ता है। बल्कि अंधेरा ही अच्छा रहेगा। वह लेडीज सीट पर बैठ गई। इस तरफ धुंधला अंधेरा-सा है। अच्छा ही हुआ। कोई परिचित वहाँ उसे देख न ले। यह मानो उसका गुप्त अभिसार है। फिर भी वह जा रही है पति के घर।

बस में समय बीत ही नहीं रहा था। इतनी धीरे क्यों चल रही है

बस ? लगता है, यह इसकी आखिरी ट्रिप है। इसीलिए इतनी देर तक खड़ी-खड़ी यात्री लिए जा रही है। बाहर भी अंधेरा है, मालती के मन में भी। उसके दिमाग में ऊटपटांग बातें आने लगीं—क्या पता, सहदेव घर पर ही न हो ? यदि हो, तो क्या पता वह मालती को घर में न घुसने दे ? मालती को चाय की दुकान पर बैठकर सारी रात बितानी होगी। इतनी रात को वापसी की बस तो मिलने से रही। क्या पता, सहदेव उसे घर में बुला ही ले ? उसे उसका अधिकार लौटा दे ? मालती से सोचा नहीं जाता। बस के धचकों और हॉर्न की कर्कश आवाज से उसका सिर दुखने लगा। कितनी दूर आ गए ? ठाकुरपुकुर पार हो गया है। खुले मैदान की हवा से उसे राहत मिली। आमतला, दस्तीपुर···मुरलाग्राम के मोड़ पर वह उतर पड़ी। सबसे बचते-बचाते उसने पतिगृह में प्रवेश किया। दो-चार बार ठोकर खाई, पर कोई बात नहीं। चांदनी का उजाला ही बहुत है। एक कुत्ता गुर्रा उठा, पर फिर शायद परिचित व्यक्ति जानकार चुप हो गया। घर में अंधेरा था। हाय ! किसीने एक दीया तक नहीं जलाया, मानो भुतहा मकान हो। सहदेव शायद क्षेत्रीय पंचायत के दफ्तर से अभी भी नहीं लौटा है। मालती थी वह तब वह जल्दी लौट आता था। अब पीछे कौन बैठा है ?

अच्छा ही हुआ, सहदेव घर पर नहीं है। घर में घुसने में कुछ भी प्रिय-अप्रिय नहीं हुआ। आजकल चोरियां बढ़ गई हैं, फिर भी सहदेव ताला नहीं लगाता। मालती का इससे भला ही हुआ। खुले दरवाजे से होकर वह आंगन में आ गई। सब उसका जाना-पहचाना है। सोने के कमरे के चबूतरे पर वह चढ़ी। कमरे की सांकल खोली। अपने कमरे में घुसी। मालती को हंसी आने लगी। एक दिन राजरानी के सम्मान से वह इस कमरे में घुसी थी, आज चोरों की तरह अंधेरे में घुस रही है। बत्ती जलाए ? क्यों नहीं जलाए ? कोई सचमुच ही चोर थोड़े ही है। अपना हक लेने आई है, बत्ती भला क्यों नहीं जलाएगी ?

टटोलकर देखा—लालटेन, दियासलाई, सब ठीक वहीं हैं, जहां पहले रहती थीं। 'फस्'—दियासलाई लगाकर मालती ने लालटेन जला ली। उसने देखा, सोने का कमरा जैसा पहले था, वैसा ही है। दीवारों

पर पहले की ही भांति उसकी ढेर सारी तस्वीरें टगी हैं। शृंगार-मेज पर दुल्हा-दुल्हन का चित्र है। शृंगार-सामग्री भी ज्यों की त्यों पड़ी है। मालती मानो कुछ आश्वस्त हुई। लगता है, कुछ बदला नहीं है, बदलेगा भी नहीं।

हाथ-मुंह धोने के लिए वह स्नानघर में गई। टंकी में पानी भरा हो था। बस के धक्कों से देह पसीने से भर गई थी। बदबू-सी महसूस होने लगी है। मालती भरे हुए पानी में आराम से नहाई। सहदेव अभी भी उसी ब्राण्ड के साबुन का व्यवहार करता है। यह ब्राण्ड मालती ने ही इस घर में चलाया था। गमछे से उसने बदन पोंछा। गमछे में मानो सहदेव की देह की गंध मिली।

नहाकर मालती को काफी राहत महसूस हुई। उसकी अलमारी में ताला लगा था। चाभियों का गुच्छा लाना भूली नहीं थी मालती। आज वह खूब शृंगार करेगी। जैसे उमा ने शिव को मोहित किया था, वह सहदेव को मोहित करेगी। अपने पति को रिझाएगी। अलमारी से निकालकर उसने सिल्क की सुन्दर साड़ी पहनी। यह सहदेव ने खुद पसंद करके, न्यू मार्केट से खरीदकर उपहार में दी थी। ड्रेसिंग टेबल के आगे बैठे-बैठे उसने अपना प्रसाधन पूरा किया। शरीर पर थोड़ा-सा सेण्ट छिड़क लिया। भाग्य से इस बीच सहदेव नहीं आया, नहीं तो उसका शृंगार अधूरा ही रह जाता। ललाट पर कुंकुम का टीका लगाते-लगाते उसने लालटेन के प्रकाश में अपनी प्रतिच्छवि को निहारा। देखने में अच्छी ही लग रही थी। सहदेव ने स्वयं कई बार उसके ललाट पर टीका लगाकर और फिर रीझकर उसे चूमा था।

अब मालती को भूख लगी थी। शाम को यों ही कुछ खाया था। अभिसार की उत्तेजना में खाने की बात ही ध्यान में नहीं आई थी। अब जरा स्वस्ति मिली, तो भूख ने जोर मारा। अब जाकर ध्यान आया, रसोईघर में भी अंधेरा था। राधी की मां खाना बनाती थी, वह तो आई नहीं। तो क्या सहदेव रात को घर पर नहीं खाएगा? शायद नहीं। मालती ने चीजें टटोलीं। खाने की कोई चीज नहीं मिली। सिर्फ कुछ बिना पकी साग-सब्जी पड़ी थी। अब खाना कौन बनाए? मालती सदा-

गट एक गिलास पानी पी गई।

रिस्टवाच में देखा, रात के दस वजने को थे। अभी भी सहदेव नहीं लौटा···और प्रतीक्षा। मालती ने सोचा, सहदेव को चौंकाया जाए। उसने लालटेन बुझा दी। कुछ देर बैठी-बैठी मच्छरों का काटना सहती रही। देह पिराने लगी। जरा लेट जाती तो अच्छा था। वह सोने के कमरे में घुसी। दरवाज़ा उसने भेड़ दिया, आपादमस्तक चादर लपेटकर बिछौने पर लंबी हो गई। चादर के बाहर असंख्य मच्छरों का क्रुद्ध गर्जन सुनाई दिया। उनके साथ ही तान मिलाकर चल रही थी, झींगुर की झनकार।

शायद मालती को झपकी लग गई थी। बाहर के दरवाज़े पर खटका होने से आंख खुल गई। कान लगाकर उसने सुनी, अपनी परिचित पद-चाप। सहदेव घर लौट आया है। मालती उसे चौंकाएगी, अभी बिस्तर से नहीं उठेगी। वह चादर लपेटे बिस्तर पर पड़ी रही, जरा-सी फांक से देखने की कोशिश,करती रही। सहदेव टॉर्च जलाकर आंगन में बढ़ आया, जूते खोलकर पांव धोए, एक डकार ली और सोने के कमरे में ही चला आया। उसने लालटेन जलाई। (आश्चर्य है!) अब भी मालती को नहीं देख पाया। उसने ट्रांजिस्टर खोला। शास्त्रीय गायन हो रहा था, उसने तुरन्त बंद कर दिया। दरवाज़े की आगल लगाई, ड्रेसिंग टेबल पर सजी हुई ब्याह की तस्वीर उठाई, लालटेन के पास लाकर कुछ पल टकटकी लगाकर उसे देखता रहा, फिर उसे वापस रख दिया। एक और डकार ली, सुराही से एक गिलास पानी लेकर पिया, फिर रोज के अभ्यास के अनुसार कमीज उतार दी। उस आधे अंधेरे में भी मालती ने उस स्वस्थ, सुडौल, गठी हुई देह को आंख भरकर देखा। सहदेव ने रैक से एक लुंगी लेकर पहनी, अपने उतारे हुए कपड़े रैक पर टांगे। फिर लालटेन को बुझा-कर वह अंधेरे में ही अभ्यस्त भाव से आकर अपनी जगह पर लेट गया—मालती के बगल में ही।

मालती से अब रहा नहीं गया। वह सहदेव के गले में बांहें डालकर उसका सिर खींचकर अपने वक्षस्थल पर ले आई। सहदेव ने झटके से अपने को छुड़ा लिया, डरकर चिल्ला उठा, "कौन है? कौन?"

खिलखिला कर हंस उठी मालती।

महदेव ने पटपट से लालटेन जलाई। उसकी रोशनी मालती के चेहरे पर आई। तब तक मालती उठ बैठी थी। सहदेव तब भी कांप रहा था। त्रस्त स्वर में वह बोला, "कौन ? मा···ल···ती ! मैं समझा···"

"बुद्धू !," मालती खिल्-खिलकर हंसने लगी।

सहदेव बोला, "मुझे डरा दिया था। अभी भी दिल धड़क रहा है।"

"डरने की कोई बात नहीं," मालती ने मजाक किया, "मैं तुम्हारी गर्दन मरोड़ने नहीं आई हूं।"

सहदेव ने कुछ आश्वस्त होकर पूछा, "तुम कब आईं ? मुझे तो पता ही नहीं चला।"

"मैंने ही तो नहीं बताया। पता चलने पर तुम मुझे आने नहीं देते, इसीलिए कुछ कहे बिना चली आई हूं।"

सहदेव चुप खड़ा रहा।

"क्या हुआ ?तुम चुप क्यों हो गए ? तुम नहीं चाहते कि मैं आऊं ? बहुत अच्छा, मैं अभी यहां से चली जाती हूं।"

"ना, ना, अभी क्यों जाओगी ? बल्कि कल सुबह चली जाना," सहदेव ने कहा, "मैं बैठकखाने में सो जाता हूं, तुम यहीं सो जाओ।"

"क्या मतलब ?" मालती ने कहा, "तुम क्या मेरे जेठ या ससुर हो ! या कि मैं अस्पृश्य हूं, अछूत हूं ?"

"कैसी बातें कर रही हो ?" सहदेव बोला, "मैं बाहर के कमरे में ही सोता हूं।" वह दरवाजे की आगल खोलने लगा।

मालती तड़पकर उठ खड़ी हुई। सहदेव का रास्ता रोककर बोली, "तुम मेरा त्याग क्यों कर रहे हो ? मैं क्या तुम्हारी पत्नी नहीं हूं ? तुम क्या मुझसे प्रेम नहीं करते ? क्या मैं तुमसे प्रेम नहीं करती ?"

"नये सिरे से फिर क्या समझाऊं ? मुझे तो जो कहना था, सब तुमसे कह चुका हूं," सहदेव रूखे स्वर से बोला।

मालती व्याकुल हो उठी, "नहीं, नहीं मुझे छोड़ो मत। नहीं तो मैं

नहीं बचूंगी।"

मालती रोने लगी, पर सहदेव ने शांत लेकिन दृढ़ हाथों से उसे एक करके शयनकक्ष का दरवाज़ा खोला और बाहर निकलने को पांव या।

मालती दृढ़ स्वर में बोली, "रुको ! लोग पालतू कुत्ते-बिल्लियों से भी तनी घृणा नहीं करते, जितनी तुम मुझसे कर रहे हो ! मैं क्या तुम्हारी र्मपत्नी नहीं हूं ? मैं क्या इन्सान नहीं हूं ?"

सहदेव संयत स्वर में बोला, "बेकार उत्तेजित मत होओ मालती !"

मालती ने यह बात सुनी भी नहीं। वह उद्भ्रांत-सी कहती गई, "अगर मुझसे इतनी ही घृणा करते हो, तो अभी हमारे ब्याह की तस्वीर लेकर इतनी हाय-हाय क्यों कर रहे थे ? क्यों अब तक मेरी तस्वीरें चारों तरफ टांग रखी हैं ? ब्याह ही जब अस्वीकार करना चाहते हो, मुझे ही जब छोड़ देना चाहते हो, तो दूर करो ना ये सब कूड़ा-कबाड़ ! तुम न कर सको, मैं अपने हाथों से किए देती हूं।"

मालती ने पागलों की तरह दीवारों से खींच-खींचकर तस्वीरें उतार डालीं, फर्श पर पटक-पटककर उन्हें तोड़ने लगी। झनाझन—कांच टूटने की आवाज़ आने लगी। विवाह का फोटो खूबसूरत फ्रेम से निकालक उसने टुकड़े-टुकड़े कर डाला और उन टुकड़ों को फर्श पर पटककर पै से रौंदने लगी। सहदेव पत्थर-सा खड़ा था। वह मानो समझ नहीं पा था कि क्या करे !

मालती ने किताबों की अलमारी खोल डाली। "ब्याह की या ढोकर क्या होगा ? इन आफतों को भी विदा किए देती हूं।" कहते वह किताबें निकालकर इधर-उधर फेंकने लगी। उसकी यह कर देखकर सहदेव स्तंभित खड़ा था। मालती की दृष्टि शैया पर प पागलों की तरह तकिये-तोषक उठाकर फेंकने लगी। "इस सुख क्या होगा!" वह चीख उठी और दांतों से चीर-फाड़कर बिछौने की धज्जियां उड़ा दीं। उत्तेजना से हांफने लगी थी मालती। उ में मानो आग धधक रही थी। पता नहीं कैसे यह आग शां

लालटेन पर नजर पड़ते ही वह दौड़कर गई और उसे उठा लिया। घुटी हुई गर्जना के स्वर में बोली, "आज मैं शरीर पर केरोसिन छिड़ककर आग लगाकर जल मरूंगी।" पलक झपकते लालटेन का ढक्कन खोलकर उसने साड़ी पर केरोसिन छिड़क लिया। वैसे लालटेन में थोड़ा ही तेल बाकी था, उसीकी दुर्गंध से कमरा भर गया। फिर बुझती हुई लालटेन छिटककर पांवों के पास आ गिरी। कांच की चिमनी टुकड़े-टुकड़े हो गई। अन्तिम लौ से साड़ी की नीचे के किनारे पर आग लग गई। पलक झपकते सहदेव कूद पड़ा, मालती का पांव जकड़कर पकड़ा और आग पकड़ती हुई साड़ी को अपने शरीर से गप्-से दबा दिया। दोनों फर्श पर लुढ़क गए। सहदेव के शरीर से दबकर घुटी हुई आग ने दम तोड़ दिया। कमरे में अटूट अंधेरा छा गया। केवल उत्तेजित सहदेव की तेज सांसें और मालती की दबी रुलाई सुनाई दे रही थी। सहदेव ने अंधेरे में ही मालती की देह से केरोसिन-भीगी साड़ी उतार दी। सौभाग्य से लालटेन में तेल कम ही था, साड़ी के भीगे हिस्से तक आग नहीं पहुंची। सहदेव ने तकिये उठाकर बिस्तर पर डाले, फिर सबल हाथों से मालती की कांपती देह को उठाकर बिखरी हुई शैया पर लिटा दिया। सहदेव ने टॉर्च जलाकर देखा कि मालती कहीं से जली तो नहीं। अच्छी तरह से देखकर वह आश्वस्त हो गया कि शरीर कहीं से भी जला नहीं है, सिर्फ पांव के पास एक जगह कुछ झुलस-सी गई है।

सहदेव बोला, "उफ्! थोड़े में ही घात टल गई। छिः-छिः क्या पागलपन कर रही थी, बोलो तो?"

मालती ने रुलाई भरे स्वर में कहा, "अब पागलपन नहीं करूंगी। तुम आओ, मेरे पास आओ।"

सहदेव उसके निकट गया। मालती ने उसे बांहों में आबद्धकर लिया। सहदेव ने बाधा नहीं दी। मालती ने चुंबनों से भर दिया सहदेव का चेहरा—आंखें, नाक, कान, ललाट, कण्ठ। सहदेव ने बलिष्ठ हाथों से मालती की देह को अपने वक्ष पर खींच लिया। शीघ्र ही मालती को पत्नी का सहज अधिकार वापस मिल गया।

मालती को गहरी नींद आ गई थी। जब नींद टूटी तब भोर हो आई

आकाश उजलने लगा था। पहले तो वह सोच में पड़ गई, 'कहां हूं
' आंखें मलकर चारों ओर देखा। नींद का नशा टूटते ही उसका मन
खी तृप्ति से भर उठा। पिछली रात की यंत्रणा और आनंद—दोनों
याद आए। मिलन के बाद वह कब पति की बांहों पर सिर रखकर
सके प्रशस्त वक्षस्थल में मुंह छिपाकर सो गई थी, पता ही नहीं चला।
सने इधर-उधर देखा, सहदेव नहीं था, पहले ही उठ गया था। उसकी
आदत है, बड़ी भोर ही उठ जाने की। लंबे अंतराल के बाद पति-संसर्ग
की अलस अनुभूति से उसकी सारी देह में एक तृप्त अवसाद छा गया
था। कुछ देर और वह बिस्तर पर ही लोटती रही, उबासी ली। शरीर
पर साड़ी नहीं थी, केवल पेटीकोट और ब्लाउज पहने थी। वह अचानक
ही लजा उठी। धड़धड़ाकर उठ पड़ी। सहदेव की दी हुई सिल्क की
साड़ी फर्श पर पड़ी थी। उसने साड़ी उठा ली। एक जगह से ज़रा-सी
जल गई है। साड़ी से केरोसिन की बदबू आ रही है। उसने नाक सिकोड़-
कर वह साड़ी फेंक दी। रैक से उठाकर पहले उतारी हुई साड़ी पहन
ली।

प्रकाश और बढ़ गया है। खिड़की का पर्दा पार करके रोशनी कमरे
में आ रही है। कमरे की हालत देखकर मालती स्तब्ध रह गई। लंका-
काण्ड मचा हुआ था। चित्र सब टूटकर चूर-चूर हुए पड़े थे, किताबें इधर
उधर फिकी हुई, दो तकिये फर्श पर लोट रहे थे। कमरे पर से मानो को
तूफान गुजर गया हो। पांव में कांच का टुकड़ा चुभते ही मालती व
बैठ गई। चटपट उस टुकड़े को बाहर निकाला। सावधानी से क
रखती वह दरवाजा पार करके बाहर आ खड़ी हुई। बाहर से अन्दर
और देखने पर उसे अपने ही ऊपर गुस्सा आने लगा। सजे-सजाए
का सामान उसने पागलों की तरह अपने ही हाथों तहस-नहस कर
था। फिर सोचा, अच्छा ही किया। कुछ चीजें गईं सही, पर प
उसने वापस पा लिया है। हर्ष से डगमगाती वह स्नानघर की
गई। शरीर से अभी भी केरोसिन की गंध निकल रही थी। वह
से मल-मलकर नहाएगी। पिछली रात की कालिमा वह पोंछ
अपने हाथ से कमरे की सफाई करेगी, नये सिरे से कमरा सजाए

उसने इधर-उधर महदेव को तलाशा। "अजी, कहां हो तुम ? कहां गए ?"—मालती ने उसे आवाज लगाई। कोई उत्तर नहीं मिला। आस-पास ही कहीं होगा। लालवाली गैया रंभा उठी। भोर के शांत परिवेश में यह रंभाना भी मालती को अच्छा लगा। लगा, कोई उसे पाकर अपनी खुशी जाहिर कर रहा है।

गुसलखाने में जाते-जाते मालती को जोरों की भूख लग आई। ध्यान आया, एक गिलास पानी पर ही सारी रात बिता दी है। भूख से पेट गुड़-गुड़ाने लगा। रसोईघर में जाकर फिर टटोलना शुरू किया—मिला—सिर्फ कच्चा अनाज, नमक, तेल। अचानक ध्यान आया, एक बड़े पीपे में मुरमुरे पड़े रहते थे न, पीपा है यहीं। झट से ढक्कन खोलते ही मुरमुरे मिल गए। साथ में गुड़ भी मिल जाता तो अच्छा रहता। गुड़ है नहीं। मालती ने सूखे मुरमुरे निगलकर एक गिलास पानी पिया। महदेव से कुछ रूठने का-सा भाव जागा। बिना कहे ही क्यों उठ गया ? और गया भी कहां ? इतनी सुबह इतनी देर भला भला कौन-सा काम हो सकता है ? कभी-कभी ऐसा कर बैठता है महदेव।

केरोसिन की बदबू बड़ी शिद्दत से महसूस हो रही है। पहले नहा-निबट लेना होगा। अलमारी से धुले हुए साड़ी-ब्लाउज निकालने होंगे। कमरे के फर्श पर कांच की किर्चें फैली हैं। फिर पांव में कांच चुभा। मालती दुविधा में पड़ गई—पहले कमरा साफ करे या नहाए धोए। महदेव होता तो वही कपड़े निकाल देता। मालती ने फिर एक बार पुकारा, "अजी, कहां गए तुम ?" कोई आहट तक नहीं। उसकी नजर चबूतरे पर रखी अपनी चप्पलों पर पड़ी। चप्पल पहनकर वह शयनगृह में घुसी। अलमारी से धुले कपड़े लेकर वह स्नानगृह में चली गई।

बहुत दिन बाद वह आराम से नहाएगी। शहराती बहू की सुविधा के लिए महदेव ने खुद यह पक्का स्नानघर और सेनिटरी प्रिवी बनवाए थे। एक बड़ा-सा हौज भी था। नल जरूर नहीं था, पर महदेव ने दिमाग लगाकर एक कामचलाऊ व्यवस्था कर दी थी। ट्यूबवेल के एक ओर उसने मजबूत बांस के सहारे तेल का खाली टिन लगा दिया था। उसमें छेद करके एक रबर का पाइप अटका दिया था। वह पाइप हौज में

आकर गिरता था। ट्यूबवेल से पानी खींचकर वाल्टी-वाल्टी लाकर हौज़ भरने की जरूरत नहीं थी। वाल्टी का पानी इस टिन में डालते ही हड़हड़ाता हुआ हौज में आ जाता था। यह काम प्राय: सहदेव ही अपने हाथों से करता था। मालती ने देखा, हौज में अभी भी काफी पानी था। सिर और शरीर में तेल की मालिश करके मालती को काफी राहत महसूस हुई। पांव झुलसा था, जलन महसूस हो रही थी, पर मालती ने उफ् तक नहीं की। अच्छी तरह साबुन मलकर उसने पानी के कई लोटे उंड़ेल लिए। बड़ी तृप्ति महसूस हो रही थी। शरीर और सिर पोंछकर नये कपड़े पहनकर अपनी देह ही बड़ी हल्की लग रही थी। बाल उसने फैला दिए। ड्रेसिंग टेबल के शीशे के सामने बैठकर देर तक बाल सुलझाएगी। भीगे कपड़े आंगन में सूखने को डालकर वह फिर शयनगृह में घुसी। कमरे की दुर्दशा मानो उसे फटकारने लगी। सच, कल शुरू रात में जरा ज्यादती ही हो गई।। क्या पागलपन सवार हो गया था कल उसपर? सहदेव के आने पर वह उससे इस ज्यादती के लिए क्षमा मांग लेगी। लालटेन मानो दांत फाड़े जमीन पर लोट रही थी। कैसा सर्वनाश करने जा रही थी वह कल! भाग्य से सहदेव पास था, औसान कायम रखकर उसपर कूदकर आग बुझा दी। नहीं तो—नहीं तो अब तक—आगे सोच भी नहीं सकी मालती। जीवन-रक्षा की इस कृतज्ञता के कारण पति के प्रति उसकी श्रद्धा सौगुनी बढ़ गई। उसने झटपट लालटेन एक ओर सरका दी। अंगुली सूंघकर उसने देखा, केरोसिन की बदबू हाथ में नहीं आई थी।

मालती श्रृंगार-मेज के शीशे के आगे बैठी। अन्यमनस्क भाव से वह गीले बालों में कंघी फिराने लगी। फर्श पर, विवाह के समय खींचे हुए वर-वधू के चित्र के टुकड़े बिखरे थे। छिः, गुस्से में आकर इसे क्यों फाड़ा उसने? फोटोग्राफर की दूकान से इसकी नई कॉपी जरूर मिल जाएगी, लेकिन···। बाल सुलझाना रोक कर उसने चित्र के टुकड़े बटोर लिए। लगता था, 'जिगसॉ पजल हो।' ड्रेसिंग टेबल पर उन टुकड़ों को जमाकरके चित्र पूरा करना चाहा, वह हुआ नहीं। सारे टुकड़े नहीं हैं। सहदेव के चेहरे में कुछ जगह छूट गई है। खुद मालती का चित्र भी अधूरा है। इस फोटो की एक कॉपी बनवानी ही होगी। फ्रेम तो साबुत ही है। कहां है

फ्रेम ? फर्श पर नहीं है। पर यहीं तो पड़ा था। मालती उसे खोजने लगी। ये रहा, बिछौने पर। यहां कैसे पहुंचा ? सुबह के धुंधलके में नींद भरी आंखों से मालती इसे देख नहीं पाई थी। जिस तरफ सहदेव सोया था, उसी तरफ के सिरहाने पर रखा है फ्रेम। सहदेव ने ही इसे संभालकर उठा रखा होगा। मालती ने आकर उसे उठाया। ये क्या ! इसके नीचे एक पत्र है। मतलब, फ्रेम से यह पत्र दबाकर रखा गया था। मालती ने जल्दी से पत्र पढ़ा। सहदेव के हाथ की लिखी कुछ-एक पंक्तियां थीं— "मून, जो हांडी बीच बाजार में टूटी है, हम कितना भी पलस्तर क्यों न लगाएं, वह जुड़ेगी नहीं। तुम जितने दिन इस मकान में रहोगी, मैं यहां पैर भी नहीं रखूंगा। चलता हूं।—सहदेव।"

मसली हुई चिट्ठी मालती की मुट्ठी में बंद थी। उसकी आंखों के आगे मानो ब्रह्माण्ड घूम रहा था। सारा शरीर मानो भूकंप के भयानक धक्के से लड़खड़ा रहा था। मालती डोल रही है, घूम रही है, गिर रही है, डोल रही है, घूम रही है। एक उत्ताल प्रलयकरी बाढ़ मानो उसे बहाए लिए जा रही है, गगनचुंबी लहरों पर उठाती-गिराती, गिराती-उठाती। डूबती जा रही है मालती, डूबती चली जा रही है अगाध उन्मत्त जल-राशि के अंतहीन तल में।

जब उसकी संज्ञा लौटी तो देखा राधी की मां ने अपनी गोद में उसका सिर ले रखा है और बीच-बीच में चेहरे पर ठण्डे पानी के छींटे देती हुई ताड़ के पत्ते से हवा किए जा रही है। नरम गोद, शीतल जल के छींटे और ठण्डी हवा—अच्छा ही लग रहा था। मालती की पलकें हिलीं-डुलीं तो राधी की मां ने भीगे तौलिए से बड़े जतन से उसका माथा पोंछ दिया। मालती ने आंखें खोलीं।

राधी की मां ने शांति की सांस ली, "चलो, भाभी को होश तो आया। अब जान में जान आई।"

राधी की मां विधवा पड़ोसिन है। मामूली-सी दक्षिणा और भोजन के बदले वह सहदेव के घर दोनों समय का खाना बना जाती है और घर-गिरिस्ती के छोटे-मोटे काम कर देती है। उसकी बेटी राधी का विवाह हो गया है, वह ससुराल में रहती है। सिर छिपाने को एक झोंपड़ी है राधी की

मां के पास, पर उससे पेट तो नहीं भरता। इसीलिए उसने सहदेव के घर का वह हल्का काम हाथ में लिया है।

मालती उठ बैठी। राधी की मां अपने आप ही बड़बड़ाने लगी, "आकर देखूं तो एक जना बेहोश पड़ा है। घर में चिरई का पूत भी नहीं। आवाज दी—दादाबाबू, दादाबाबू, दादाबाबू—! कोई जवाब नहीं। कमरे में भी सब टूटा-बिखरा पड़ा। डर से मुझे तो पुरखे याद आ गए, और क्या! कईं रात-बिरात डाकू तो नईं आए? कईं वो भाभीरानी का खून करके चले गए हों। मैं तो रो-रोकर गुहारने लगी।"

मालती चुपचाप सुनने लगी।

राधी की मां बोली, "मेरी चीख सुनकर आस-पड़ोसी दौड़े आए। पर जैसेई देखा कि भाभीरानी की ये हालत है, तो सुसरे मूं फेरकर चल दिए। आदमी हैं या कसाई? मैं टेर लगाने लगी, 'अरे कोई है? डाक्टर-बैद बुलाओ, कोई थाना-पुलस में खबर दो।' बनरजी मोशाय का साला बोला, 'घर की महाभारत में पुलस क्या करेगी? सहदेव ही बऊ को मार-मूरकर लापता हो गया है।' सुना, दादाबाबू भोर होते न होते एक बकस लेकर पैली बस से कलकत्ता चले गए, चाय की दुकान के छोरे ने अपनी आंखों से देखा।"

मालती शांत भाव से बोली, "ना, ना, राधी की मां, तुम्हारे दादाबाबू ने नहीं मारा। मुझे ही चक्कर आ गए थे, सो गिर पड़ी।"

राधी की मां बोली, "मैं लड़ी उन लोगों से। मेरे दादाबाबू कभी बऊ की कुटाई नईं कर सकते। ऐसे चंडाल नईं हैं वो। पर वो लोग मानें भला! बोले, 'औरत को हड़का देने पर भी घर में आ घुसी है। सहदेव मार-पीट नईं करेगा तो और क्या करेगा?' सुन लो बात।"

मालती ने मन ही मन सोचा, सहदेव मारपीट करता तो अच्छा था। मालती को मार डालता तो सारी जलन ही खतम हो जाती। पर वह तो हुआ नहीं। मालती ने आग में जलकर मरना चाहा था। उससे सहदेव ने बचाया, उमर भर जला-जलाकर मारने के लिए।

राधी की मां बोली, "अब उट्ठो भाभी रानी, जमीन से उठकर बिछौने पर सो जाओ। मैं कुछ पका देती हूं। गरम-गरम खिचड़ी रांध

हूं। तुम भाभी ने थोड़ी तबीयत सम्हाले।"

मालती बोली, "नहीं राधो की मा, मेरी तबीयत अब ठीक है। अब मैं कलकत्ता जाऊंगी।"

"ये कैसी बात भाभी?" राधो की मां ने आशंका जाहिर की, "अभी बेहोश पड़ी थी, अभी-अभी आंख खुली, अभी कैसे जाओगी कलकत्ता? बस के धक्के से जो फिर कहीं चक्कर आ जाए? तुम कम से कम चार दिन यहां रह जाओ।"

मालती रुंधे गले से बोली, "यहां रहने का अधिकार नहीं है मुझे, राधो की मा! मैं यहां रही तो तुम्हारे दादाबाबू घर की तरफ झांकेंगे भी नहीं। मैं उनका घर क्यों छुड़ाऊं? जहां मुझे ठांव है, वहीं जाती हूं।"

"दादाबाबू के साथ मालन फिर लड़ाई हो गई तुम्हारी," राधिका की मा ने कहा, "इधर-उधर से काना-फूसी में सुना कि तुम दोनों आपस में ही मुकद्दमा लड़ रए हो। नये जमाने की ये बातें भली नहीं हैं भाभी रानी! मैं कहूं, तुम लोग मेल कर लो। येई देखो, राधो का बाप गुस्सा होने पर मुझे कितना मारता था, तो हम लोगों ने क्या आपस में मुकद्दमा लड़ना शुरू कर दिया? गुस्सा खतम होता तो वई कितना सुहाग करता था मेरा! तुमें बी सुहाग मिलेगा भाभीरानी।"

"सबकी हालत तो एक जैसी नहीं होती, राधो की मा," मालती ने गहरी सांस ली।

"जानती हूं, इन नासपीटों ने चुगली कर-करके दादाबाबू के कान भर दिए हैं," राधो की मा आह भरकर बोली, "नईं तो ऐसा बम भोलानाथ ऐसी सोने की मूरत की बेकदरी करता? तुम चिंता मत करना भाभी, सब ठीक हो जाएगा। मा काली की मनौती मानो। मां सब ठीक कर देंगी।"

इस सरल-स्वभावा ग्रामीणा के साथ मालती भला क्या तर्क करे! वह उठ खड़ी हुई। सिर अब भी चकरा रहा था। चिट्ठी फर्श पर पड़ी थी। मालती ने एक-बार उस ओर देखा। पड़ी रहे। उसके कठोर अक्षर हमेशा के लिए मालती के हृदय पर खुद गए हैं। कभी भी मिटेंगे नहीं।

मालती झूम रही थी। राधी की मां ने उसे संभाल लिया। पर मालती जाएगी ही। अब एक पल भी इस घर में नहीं रहेगी। राधी की मां ने कहा, "बात नई सुनोगी ? यई सरीर लेकर जाओगी ? चलो, फिर बस पर चढ़ा आऊं तुमें।"

राधी की मां के कंधे का सहारा लेकर ढुलकती-डोलती मालती बस के रास्ते तक गई। गांव के दो-चार लोगों ने उसे देखा, पर पूरी तरह अपेक्षा कर गए। कुछ देर में ही बस आ गई।

मालती ने पर्स से पांच रुपये निकालकर राधी की मां के हाथों में खोंस दिए। बोली, "मिठाई खाना।"

बस में चढ़ गई मालती—श्रांत, क्लांत, अपदस्थ, लांछित, परित्यक्त।

बिंदी बाड़ीवाली प्राणपण से जुट गई—मुकदमे में हराकर जमाई के होश ठिकाने लगाने ही होंगे। अदालत के माध्यम से उसे मजबूर करना होगा, पत्नी को वापस लौटा लेने के लिए। "ब्याही-सराही बहू; अगनी की साच्छी में ब्या हुआ, ऊपर से रजिस्टरी। 'नईं मानता' कैने से ई हो गया ? अदालत में जब साब नाक घिसवाकर छोड़ेंगे। ब्याही बहू को वापस लेना ही पड़ेगा," बिंदी ने पीड़ामिश्रित फुफकार से कहा।

पर बिंदी की दुश्मन निकली अपनी जाई बेटी। वह मुकदमा लड़ना ही नहीं चाहती। इसीको लेकर मां-बेटी की तकरार हो जाती है। अर्थात्, मां बेटी पर बकझक करती है। बेटी तो जबान बंद किए बैठी रहती है। बीच-बीच में एक ही बात कहती है, "बीच बाजार में हांडी टूटी है। पलस्तर से उसमें जोड़ नहीं लगेगा।" सहदेव की बात को ही मालती कातर भाव से दुहरा देती है। पर बिंदी बाड़ीवाली इस बात पर कान भी नहीं देती।

"हैं बाबू, ऐसा कोई बी कानून है कि बेसवा (वेश्या) की बेटी ब्या नईं कर सकती ?" उसने वकील से पूछा। "पता है मुझे, ऐसा कोई कानून नईं है। क्या होता है फराड ? फोरट्वेंटी—जिसे कैते हैं ठगना, धोका

देना। मैंने कब धोखा दिया जमाई को? जमाई के बड़े भाई ने मेरी बेटी से ब्याह करना नहीं चाहा था? वो तो लड़की ही राजी नहीं हुई, उसे लुच्चा जानकर। जमाई ने तो सब जान-सुनकर शादी की थी। बिंदी बाड़ीवाली ने अपने घर, बिपिन दास लेन में ही धूम-धाम से शादी की है। कित्ते तो लोग न्योता खा गए। कित्ते बाबू लोग आए थे; बाड़ीवालियां आईं थीं; थाने के बड़े बाबू, छोटे बाबू, सिपाई लोग आए थे; एमेले बाबूलोग भी आए थे—पत्तल परोसवाकर खा गए। पाल्टी के नेता भी आए थे। कहां, किसीने भी तो बेस्या का अन्न खाने में आपत्ती नहीं की। और, जिस समाज में किसीने कुछ कह दिया; तो घर की सती-लछमी बहू को त्याग देना होता है? किस देस का न्याय-धरम है ये? जमाई के बड़े भाई को ये ब्याह करने में कोई लाज नहीं थी, तो जमाई को क्यों हो? क्यों झूट बोलता है कि हमलोगों ने धोखा दिया है? मैं खुद कटघरे में खड़ी होऊंगी, खुद गवाही दूंगी। मेरा चरित्तर खराब हो सकता है, पर इसीलिए मेरी बात भी झूटी होगी क्या?

"हां, झूट तो हम सब बोलती हैं—वो साज-सुहाग के समय, बाबूलोगों से रुपये-गहने की बख्शीस लेने के वखत। इसीलिए क्या जब लड़की का ब्याह टूट रा हो, जीवन-मरन की बात आ पड़ी हो, तब भी मैं जज साब के आगे झूटी बात बोलूंगी? जज साब यो क्या बेसवा, बाड़ीवाली होने के कारन मेरा बिस्वास नहीं करेंगे?" बिंदी बाड़ीवाली वकील से कहती चली गई, "ऊपर से जमाई की चिट्ठियां भी तो हैं। आहा, क्या सुहागभरी चिट्ठियां हैं! अच्छर-अच्छर मानो कविताई है। अरे, किसान के बेटे ने इतनी कविताई कहां से सीखी? अरे बाबू, ये सब सिच्छा है सिनेमा की, नाटक-नावेल की। ए छोकरी, अपने दूल्हे की चिट्ठियां दीं वकील बाबू को?"

मालती ने सिर हिलाकर बताया, "नहीं।"

"क्या बैठी है रे? तुझे सिर पटक-पटककर समझाया था कि चिट्ठियां वकीलबाबू को दे दे। कान में गई नहीं वो बात? बाबू, चिट्ठियां पढ़ने तो पता चलता, जमाई को हमारे बारे में सब्ब कुछ पता था। ब्याह से पैले ही उसने लिखा था, 'कीचड़ में कमल का फूल जनमता है। तुम मेरी

।' "

लती ने मृदुस्वर में प्रतिवाद किया, "नहीं मां, व्याह के पहले
याह के वाद उन्होंने ये लिखा था।"

अरे, एक ही वात है। व्या के पँले-वाद में होने से क्या आता-जाता

"वहुत-कुछ आता-जाता है," वकील ने कहा, "कम-से-कम प्रतिवादी तो कह ही सकता है कि विवाह के पहले इनलोगों का असली परिचय लूम नहीं था।"

विंदी कुछ इतस्ततः करके वोली, "व्या के वाद तो जरूर ई पता वल गया था। जमाई ने चिट्ठी में क्या अड़ं-वड़ं मंतर नई लिखे—'इस्तिरी रतनं दुष्कुलादपि···? ए छोकरी, चिट्ठियां दे ना वकीलवावू को !"

"चिट्ठियां तो हैं नहीं, मां," मालती ने कहा।

"लो, सुनो वात !" विंदी वोली, "घर पे छोड़ आई क्या ?"

"नहीं मां," मालती वोली, "सारी चिट्ठियां उस दिन मैंने गंगाजी में वहा दीं।"

विंदी गाल पर हाथ रखकर वोली, "आसमान से गिराया तूने ! छोकरी, इत्ती सारी चिट्ठियां—सव गंगाजी में वहा दीं ? अव केस कैसे लड़ेगी ?"

"मैं तो लड़ना नहीं चाहती," मालती ने कहा।

"लड़ना तो तुझे होगा ई," विंदी जोर देकर वोली, "और जीतना वी होगा। जरूरत पड़ी तो मैं जज साव के घर तक जाऊंगी। जाके उनके पँर पकड़ लूंगी।"

वकील ने धमकाया, "खवरदार, यह काम कभी मत करना। न तो कंटेंप्ट आफ कोर्ट हो जाएगा। अदालत की मानहानि के जुर्म में जाना पड़ेगा।"

"वह भी जाऊंगी, वावू, वह भी जाऊंगी। वेटी के व्या के किस्से लेकर समाज में मूं नई दिखा पा रई हूं। वाड़ीवालियां अफसोस क वहाने मेरा मजाक उड़ाती हैं। किरायेदार लड़कियां कैती हैं, 'वेटी की साध तो पूरी कर ली, अव उसे पेशे में लगाकर रुपया कमाओ

मेरा ऊंचा माथा नीचा हो गया, और ये घर की दुश्मन, ये विभीषन बनी है कि लड़ाई ही नहीं करनी। मर मुई ! जिसके लिए चोरी करो, वई कहे चोर।"

वकील ने कहा, "अब काम की बात पर आओ। तुम्हारी बात मैंने सुन ली। तुम जो गवाही देना चाहती हो, मेरा जूनियर संक्षेप में, बंगला में लिख देगा। उसे अच्छी तरह पढ़कर, तैयार होकर आना। कटघरे में ऊटपटांग कुछ मत बोलने लगना, नहीं तो अच्छा-भला केस बिगड़ जाएगा। इसबार सुनू दासी भी गवाही है। वही असल गवाही है। तुम बोलो, तुम्हें क्या कहना है ?"

मालती ने कहा, "मैं क्या बोलूं ? मुझे कुछ भी नहीं कहना है।"

"ये कैसी बात हुई ? तुम्हारे ही विवाह का मुकदमा है। तुम ही गवाही न दो, ये कैसे हो सकता है ? केस तो बहुत-कुछ ठीक गवाही पर ही निर्भर करता है। ओथ अगेन्स्ट ओथ। केस सिर्फ कागज-पत्र, दलील-दस्तावेज का तो नहीं है। इसका फैसला इसपर निर्भर करता है कि जज साहब किसकी कही हुई बात का विश्वास करते हैं।"

"मैं गवाही नहीं दे सकूंगी।" मालती ने कहा।

"यह भी कोई बात है ?" वकील बोले, "तुम्हें डर किस बात का है ? मैं वहां रहूंगा ही। उस पक्ष का बैरिस्टर उल्टी-सीधी जिरह करे तो मैं एतराज उठाऊंगा। जज साहब उसे डांट देंगे। तुम्हें कोई डर नहीं।"

मालती बोली, "मैं गवाही नहीं दूंगी।"

"छि, छि ! दो-दो केस हैं। तुम गवाही नहीं दोगी तो कैसे चलेगा ? सुना है, तुम नाटकों में भाग लेती रही हो, ओथेलो को फेस किया है। सोच लो, ये भी एक थियेटर है, और तुम एक्टिंग कर रही हो।"

मन ही मन हंस पड़ी मालती, 'जीवन-मरण की समस्या को लेकर नाटक—एक्टिंग ?' वह चुप ही रही।

बिंदी बोली, "अलबत्त गवाही देगी ये छोरी, वकीलबाबू। आपने तो सब सुना है। इसे क्या बोलना है, जरा लिख दीजिएगा, सब रट जाएगी। कित्ते बड़े-बड़े पारट रटकर धड़ाधड़ बोल जाती है, ये नहीं कर सकेगी भला ?"

वकील बोले, "अच्छा, मेरा जूनियर इसकी गवाही भी लिख देगा।, उसे ठीक से पढ़ आना, अच्छा ? उसी से मुकदमा, समझो, जीता हुआ रखा है।"

कंसल्टेशन के बाद वे जब वकील के यहां से लौटे, टैक्सी में ही विंदी वाड़ीवाली रास्ते-भर वेटी को कथ्य-अकथ्य गालियां सुनाती आई। उसने चिटि्ठयां गंगा में क्यों फेंक दीं ? गवाही देना क्यों नहीं चाहती ? यही सब प्रश्न। एक धोखेवाज ने शादी के वहाने इतना भारी दहेज मार लिया—रुपये, सामान, कपड़े, घड़ी, अंगूठी, साइकिल। धोखेवाज के होश ठिकाने नहीं लगाने होंगे ? मालती चुपचाप सब सहन करती गई।

वाद में हरु मित्तर ने कहा, 'सामनेवाले वड़ा वैरिस्टर लगा रहे हैं, हमलोग सिर्फ वकील रखें ? हम भी उन लोगों से वड़ा वैरिस्टर लगाएंगे।"

"उससे केस अच्छा होगा ?" विंदी ने प्रश्न किया।

"पक्की वात है," हारू ने कहा।

"खरचा कितना पड़ेगा ?" विंदी ने पूछा।

"वह तो काफी पड़ेगा। दो-दो मामले हैं, सस्ते में थोड़े ही निवटेगा। कितने दिन मुकद्दमा चले, कुछ पता नहीं। वैरिस्टर साहव एक-एक दिन की पचास मोहर के हिसाव से चार्ज करेंगे।"

"सत्यानाश !" विंदी वोली, "मेरे घर में तो इतनी मोहरें नहीं हैं। चांदी के रुपये ही नहीं जुटते, सोने की मोहर कहां से आएगी ?"

हारू रोव डालता हुआ वोला, "तुम सव औरतें, कोर्ट-कचहरी की बातें क्या समझो ? कोई सचमुच की सोने की मोहरें देनी हैं ? उन मोहरों की कीमत देनी होगी कागज के नोटों में। एक-एक मोहर की कीमत है, सतरह रुपये।"

"ऐसे भी तो ढेर रुपये लगेंगे," विंदी त्रस्त होकर वोली, "दो मुकद्दमों में इसी वीच कितने रुपये निकल गए।"

"मुकद्दमा लड़ने में रुपये वहाने पड़ते हैं," हारू वोला, "छोकरियों को लेकर ऐश करने में कितने रुपये लगते हैं ? तो फिर केस लड़ने में भला रुपये नहीं लगेंगे ? वो क्या मुफ्त में ही हो जाएगा ? तुमलोग

कुछ भी नहीं समझती। हां, वकीलबाबू ने कहा है, बैरिस्टर साहब के बाबू को पटाकर फीस कुछ कम करवा लेंगे।"

"बाबू क्या हो जी ?" बिंदी हैरान थी, "हमलोगों की तरह बैरिस्टर साहब के भी बाबू होते हैं ?"

'धुर् जनानी !" हारू बोला, "इस तरह के बाबू नहीं। वो तो साहब के क्लर्क होते हैं। साहब के साथ-साथ उन्हें भी दक्षिणा देनी होती है।"

"मैं मूर्ख औरत जात, कानून-आनून क्या मैं समझूं ? हां, इससे ही मुकदमा जीते तो बैरिस्टर साहब को भी इज्जत दो।"

दो-दो मुकदमे—जमकर तैयारी हो रही थी। मालती के पक्ष में वकील बैरिस्टर थे। पैसा पानी की तरह बहने लगा। एक दिन बैरिस्टर साहब के चैंबर में जमकर सलाह-मशविरा हुआ।

किताबों की अलमारियां कमरे की छत तक ऊंची थीं—मोटी-मोटी जिल्द मढ़ी पुस्तकें, सब देखने में एक-सी ही लगती थीं। मालती ने कभी भी एक-साथ इतनी किताबें नहीं देखी थीं। वह हकबका गई। बड़े भारी बैरिस्टर थे—मिस्टर वाइ० सामन्त—श्री यतीनचन्द्र सामन्त। होंठों के कोने में लटकता पाइप—चबा-चबाकर जैसी बकरा घोल रहे थे, बहुत-सी बातें मालती की समझ में ही नहीं आ रही थीं। बातें बहुत-कुछ यहीं पहेलियासी थी। मालती ने मिनमिनाते हुए कहा, "यह गवाही नहीं दे पाएगी।"

रोबदार आवाज में साहब ने उसे एक फटकार लगाई। वकील ने कहा, "मुवक्किल ही अगर होस्टाइल विटनेस हो जाता है, तो मोटा ले जाइए अपना फीस। कोर्ट में लाफिंग स्टॉक बनाना है हमें ?"

वकील दबे स्वर में बोले, "बचपना है। बहुत दुखी है, इसीलिए इतना डर रही है।" साहब खुश होकर नरो-नुमो हंसी हंसे—खुर-खुर, बोले, "डोन्ट बी अफ्रेड।" साहब ने एक मोटी किताब खोली। उसे देख-कर कुछ आदेश दिया और जूनियरों ने अलमारियों से कुछ मोटी-मोटी किताबें निकालीं। एक-एक कर उन अंग्रेजी किताबों से कुछ पढ़ा गया,

कुछ नोट लिए गए, मालती सारे विचार-विमर्श का बिंदु-विसर्ग भी नहीं समझी। अंत में तय हुआ कि बैरिस्टर साहब जज साहब से प्रार्थना करेंगे कि दोनों मुकदमों की सुनवाई एक ही दिन हो—एक के बाद दूसरा। इससे काम में सुविधा होगी। जरूरत पड़ी तो उन्हीं गवाहों को दोनों मामलों में काम लिया जा सकता है। इससे रुपये भी कमखर्च होंगे, झंट भी कम होगा। साहब के घर से वे लोग काफी रात गए लौटे।

बैरिस्टर साहब की प्रार्थना मंजूर हो गई। जज साहब ने दिन तय कर दिया। उस दिन दोनों ही मुकदमे सुने जाएंगे—लिस्ट में एक के बाद दूसरा। सुनवाई का दिन नजदीक आ रहा था। कैलेण्डर में तारीखें गिनी मलती ने। दस दिसम्बर को सुनवाई होगी। सुबह से सारा घर अदालत जाने को तैयार हो गया। मां की डांट खाकर मालती भी बन-संवर गई। मामूली सज्जा, सीधी-सादी पोशाक। ठीक दस बजे टैक्सी आ गई। हारू मित्तर आवाजें लगाने लगा। बिंदी बाड़ीवाली ने काली माई के चित्र को प्रणाम किया, मुकदमा जीतने पर दो बकरे चढ़ाने की मनौती मानी। हारू बिंदी को लेकर टैक्सी में चढ़ा। मालती को उतरने में कुछ देर हो रही थी। हारू शोर मचा रहा था।

मालती ने इस शोर की जरा भी परवाह नहीं की। उसने अपना रास्ता चुन लिया था। वह पीछे के दरवाजे से घर के बगलवाली गंदी गली में निकल आई। कूड़े का ढेर पार करके, ठोकर खा-खाकर संभलते हुए, उसने बगल की एक संकरी गली में प्रवेश किया। गलियों-गलियों होती हुई वह बड़ी सड़क पर आ पहुंची। तब तक दस बज चुके थे। सड़क पर ऑफिस जानेवालों की भीड़ थी। उसी भीड़ में मालती ने अपने आपको छुपा लिया। उसमें घुल-मिलकर वह पैदल ही चलने लगी। चलना शुरू किया तो चलती ही गई। उद्देश्यहीन-भाव से रास्तों पर भटकते-भटकते वह किले के मैदान में गंगा के किनारे आ पहुंची। बहुत देर से चलते-चलते वह थक गई थी। एक खाली बेंच पाकर वह उसपर बैठ गई। नदी में जहाज, नावें, मोटर बोट छक-छक कर रहे थे। कुली, खलासी, मल्लाह शोर मचा रहे थे। पीछेवाली सड़क पर लॉरियां, बसें,

टैक्सियां, कारें दौड़ रही थीं। मालती अर्थहीन भाव से इधर-उधर देख रही थी, तरह-तरह का शोर एक कान में आकर दूसरे कान से निकल जाता था।

उसके मन में था दृढ़ संकल्प—वह मुकदमा नहीं लड़ेगी, नहीं लड़ेगी, नहीं लड़ेगी।

जाहिर है, उस दिन मालती का मुकदमा खारिज हो गया। महदेव के पक्ष में एकतरफा फैसला हो गया उनका विवाह-विच्छेद हो गया।

सिर्फ कहानी की खातिर कहानी होती तो यहीं समाप्त हो जाती। पर मालती तो काल्पनिक नायिका नहीं है—वह तो यथार्थ है, शायद कठोर यथार्थ। सच तो यह है कि मालती से मेरा परिचय ही मुकदमा समाप्त होने के बाद हुआ। उसीने आकर मुझपर अभियोग लगाया था, "आप अगर कोशिश करते तो मेरा घर नहीं टूटता। आपने कोशिश नहीं की, इसीसे मेरा घर टूटा।"

उसकी इस भ्रांत धारणा को मैं कैसे दूर करूं ?

मालती अपनी ही धुन में बोलती चली गई, "पता है आपको, घर बसाने का अरमान मेरा बहुत पुराना है। मैं जिस वातावरण में बड़ी हुई, वहां कोई घर नहीं बसा पाता। पल-भर का परिचय, घनिष्ठता, लाड़-दुलार, लेन-देन, बस। बहुत से बहुत यह कि कोई लड़की कुछ दिन रखैल बनकर रह ली। पर वह भी कितने दिन ? ताश का घर ठहरा, कभी भी टूट सकता है। मैं देखा करती थी, जहां नारी-पुरुष घर बांधकर रहते हैं— एक साथ रहते हैं, खाते हैं, लड़ते-झगड़ते हैं, प्यार करते हैं। मेरी एक दीदी ब्याह करके कितनी सुखी है। मैंने भी कोशिश की थी, पर मेरे भाग्य में ही सुख नहीं है।"

"तुम्हारी कोई दीदी भी है ?"

"अपनी दीदी नहीं, मेरी मौसेरी बहन।"

"तुम्हारी कोई मौसी भी है ?"

"है क्यों नहीं। देस में—मेदिनीपुर में। मौसी तो मेरी मां की तरह घर से भाग नहीं आई थी। मां ही वेवकूफों की तरह भाग आई थी"

मालती अचानक ही मुझसे बोली, "देखिए, मुझे कोई नौकरी दिलवा सकेंगे? अच्छी नौकरी। अच्छी से मेरा ये मतलब नहीं है कि बहुत रुपये मिलें, वल्कि ऐसी नौकरी, जिसमें मैं अपना सम्मान वचाए चल सकूं।"

"तुम नौकरी करोगी, मालती?"

"हां! यह अवश्य है कि मेरी योग्यता मामूली ही है। मैं थोड़ा-बहुत गा सकती हूं, नाच सकती हूं, अभिनय कर सकती हूं, मामूली सिलाई-कढ़ाई, रसोई जानती हूं। पर पढ़ी-लिखी तो मैं ज्यादा नहीं हूं। कैसी नौकरी करूं, वताइए तो?"

"तुम तो अच्छा अभिनय कर सकती हो। मेरे नाटक में रूपसी का रोल तुमने वहुत शानदार किया था।"

"नटीवृत्ति?" मालती म्लान मुस्कान के साथ बोली, "अब और नहीं।"

"क्यों?"

"मैं जो नहीं हूं, वही लोगों के सामने दिखाना होगा? इस झूठ को जितनी कुशलता से दिखा सकूंगी, उतनी ही तालियां मिलेंगी। पर असल में मैं जो हूं, उसे क्या लोग कभी भी स्वेच्छा से ग्रहण नहीं करेंगे, या चाह कर भी ग्रहण कर नहीं सकेंगे?"

"इसी चिंता में तो तुमने डाल दिया। आत्मसम्मान वचाए रखकर कौन-सा काम कर सकती हो? शिक्षिका—?"

"पागल हुए हैं आप? दुनिया-भर के लोग मेरे पीछे पड़ जाएंगे, खोद-खोदकर कीचड़ निकालेंगे। गंदगी के छींटे उड़ा-उड़ाकर मेरा जीना दूभर कर देंगे।"

"सही बात है। रेडियो पर ऑडीशन दिया है कभी?"

"सलाह बुरी नहीं है। एक वार देकर देखूंगी, पर उसमें सफल होने पर भी जरूरी नहीं है कि नियमित प्रोग्राम मिलें ही। मैंने पढ़ाई फिर शुरू कर दी है," वह बोली।

मैंने कहा, "पढ़ाई करने से नौकरी मिल ही जाएगी, इसकी क्या गारंटी है? हजारों ग्रेजुएट, एम०ए०, इंजीनियर बेकार बैठे हैं। मेरे पास ही कितने आदमी आते रहते हैं, सिफारिश के लिए, सर्टिफिकेट के लिए। कितनी ही उच्चशिक्षिता, गुणी लड़कियां भी आती हैं। पर नौकरी कितनों को मिलती है?"

"तब आप ही बताइए, क्या करूं?" मालती हताश होकर बोली।

"तुम नौकरी करने की धुन में क्यों पड़ी हो? तुम्हें नौकरी की ज़रूरत क्या है?" मैंने प्रश्न किया।

"यह क्या रहे हैं आप? ज़रूरत नहीं है?" मालती क्षुब्ध होकर बोली, "पर मेरे लिए घर बंद हो गया है। वहां से भागकर जितनी जल्दी अपने पैरों पर खड़ी हो सकूं—इसीमें मेरा कल्याण है।"

"क्यों? तुम तो माता-पिता की इकलौती संतान हो—"

मालती चिढ़कर बोली, "और मत कीजिए—ये सब शर्म की बातें हैं। कभी-कभी मन में आता है, मैं पैदा होते ही मर क्यों नहीं गई? मां के पेट में तो और भी कई आए थे। मां ने उन्हें नष्ट कर दिया था। पर नष्ट होकर ही वे बच गए। मैं बच कर नष्ट हो रही हूं।"

"क्यों, मां के साथ क्या तुम्हारी बनती नहीं?"

"बिल्कुल भी नहीं। मां क्या चाहती है, मेरी समझ में नहीं आता। आपको मैंने अपनी कहानी कहां तक सुनाई है? ओ—हां, पर मैं भाग कर गंगा के किनारे बैठी थी, वहां तक।"

"और भी बताया है, दोनों मुकदमों की परिणति के बारे में।"

"यह तो मुझे बहुत बाद में पता चला। सुनिए न, आगे और क्या-क्या हुआ।"

मालती अपनी कहानी खतम करना नहीं चाहती थी। वह आगे सुनाने लगी। एक टेप-रेकॉर्डर होता तो उसकी जीवन-कथा बंद कर लेता। पर वह तो था नहीं। इसलिए याददाश्त से ही मैं अपनी भाषा में लिख रहा हूं।

पर लौटते ही मालती ने देखा—लड़कियों की एक भीड़ वहां भिन-भिना रही है। उनमें से कुछ को वह पहचानती थी। उसकी मां की

किरायेदार थीं वे। वाकी सव चेहरे नए थे। मालती को देखकर कुछ चुपके-से हंस दीं, किसीने दूसरी को धक्का दिया, आंख मारी। मेनका नाम की लड़की खनखनाती हुई बोली, "कहां चली गई थी दीदी? तुम्हारी मां को तो फिट आ रहे हैं। उधर तुम गायव हुईं, इधर तुम्हारी मां टैक्सी में ही वेहोश हो गईं। वड़े वावू की चीख-पुकार पर मुहल्ले के लोगों ने आकर उठा-उठू कर उन्हें कमरे में लाकर सुलाया। तकदीर से खवर मिल गई तो लड़कियों को लेकर मैं आ गई। नहीं तो वड़े वावू कचहरी भी नहीं जा पाते। माधो डाक्टर आया था। नाड़ी देखकर बोला, 'कोई खास वात नहीं है। आंतों में चोट लगी है तो सिर चकरा गया है। मैं एक पुड़िया देता हूं। थोड़ा होश आए तो ब्रांडी पिला देना।' तुम कहां गई थीं दीदी?"

विंदी रोज ही थोड़ी-सी ब्रांडी पीती थी, वहुत पुरानी आदत थी उसकी। पर अधिक पीने से उसे नशा हो जाता था।

मालती ने कहा, "गंगा के किनारे घूमने गई थी।"

"ये घूमने का समय था तुम्हारा?" मेनका झमककर बोली, "मुझे कोई वावू सौ रुपये भी देता, तो ऐसे समय उसके साथ घूमने नहीं जाती।"

"मां कैसी है?"

"वहोऽऽत अच्छी। जाओ ना उसके पास। मुकद्दमे में तो हार हुई है, वड़े वावू ने फोन किया था कचहरी से। तव से विंदी मां वकझक किए जा रही हैं। मतलव-वेमतलव मेरे वालों को मुट्ठी में ले-ले कर झिंझोड़ रही हैं। इस नई लड़की संध्या को वार-वार लतियाया—वेचारी पांव दाव रही थी। विंदी मां का हुकुम है, जैसे ही तुम घर लौटो, हमलोग तुम्हें पकड़कर उनके पास ले जाएं।"

"पकड़ने की ज़रूरत नहीं होगी मेनका। चलो, चलें," मालती ने कहा।

जैसे अपराधी को गिरफ्तार करके इंस्पेक्टर दरोगा के पास ले चला हो, उत्सुक लड़कियों का झुण्ड भी पीछे-पीछे चला।

सोने के कमरे में विंध्यवासिनी एक चटाई पर चित पड़ी हुई थी।

उसकी स्थूल काया लगभग नग्न थी। केवल कमर के गिर्द एक छोटा-सा कपड़ा अवशिष्ट लज्जा का निवारण कर रहा था। एक लड़की उसकी पद सेवा कर रही थी, एक लड़की हाथ दबा रही थी, एक ओर कोई हाथ के पंखे से हवा कर रही थी। सर्दी के इस अपराह्न में भी छत का पंखा पूरी तेजी से चल रहा था। पास ही शराब का ग्लास रखा था और दारू की बोतल लगभग खाली हो चुकी थी।

आहट सुनकर विन्ध्यवासिनी ने पलकें उठाईं और मिमियाते-से स्वर में बोली, "ओ री मेनका, गरीबों की बेटी घर लौटी है। तुम लोग शंख बजाओ, उलूध्वनि करो।"

वे सब चुपचाप खड़ी रहीं।

विन्ध्यवासिनी चीख उठी, "सुनाई नहीं पड़ता हरामजादियो! शंख बजाओ, उलूध्वनि करो।"

लड़कियां समवेत कंठ से उलूध्वनि करने लगीं। मेनका बगल के पूजा-घर से शंख लाकर बड़े उत्साह से बजाने लगी।

"एइ चित्रा, करमजली," विन्ध्यवासिनी ने कहा, "पूजाघर में धूप-दानी पड़ी है, झटपट जला ले। गरीबों की बेटी के सामने धूपदानीवाला नाच तो नाच रे, जैसा इस बार सार्वजनिक दुर्गापूजा में नाची थी।"

चित्रा नाम की लड़की हुक्म की तामील करने दौड़ पड़ी।

विन्ध्यवासिनी बोली, "आहा, आज उमा मेरे घर पधारी है, उसका सत्कार नहीं करना होगा?"

इसी बीच चित्रा धूपदानी जला लाई। घना धुआं उठ रहा था, धूप की सुगंध फैल रही थी। लड़कियों ने जगह बना दी। चित्रा साड़ी का पल्ला कमर में खोंसकर, हाथ में धूपदानी लेकर उस थोड़ी-सी जगह में ही मालती के सामने नाचने लगी। मालती कठपुतली की भांति कठिन होकर खड़ी रही। विन्ध्यवासिनी स्थिर आंखों से लड़की की ओर देखती रही।

नाच समाप्त हुआ।

विन्ध्यवासिनी उठ बैठी। बनावटी आनंद से वह बोली, "अहा रे, आज मेरे लिए कितनी खुशी का दिन है! मेरी बेटी आज आजाद हुई।

व्याह की सांकल काटकर। पिंजरे का पंछी अब आसमान में उड़ेगा। पर ये क्या ? पंछी की मांग में सिंदूर क्यों है ? वो तो सांकल का निसान है, पोंछ डाल, पोंछ डाल !"

मालती दृढ़ स्वर में बोली, "ये सिंदूर मैं नहीं पोंछूंगी मां। कैसा भी, कुछ भी हो, मैं नहीं पोंछूंगी।"

'हि-हि-हि-हि—' हंसते-हंसते विंध्यवासिनी लोट-पोट हो गई। बोली, "सुना मेनका ? सुना चिंता ? सरीफों की बेटी कहती क्या है ? तुम लोग जैसे कबी-कबी मांग में सिंदूर भरकर बस-टराम पारक-बगीचे में गाहकों का शिकार करने जाती हो, पराई औरत जानकर बाबू लोग झट-से फिसल जाते हैं, चारा निगल लेते हैं, वैसे ही ये भलेमानस की बेटी भी तुम लोगों का रास्ता ही पकड़ेगी रे। मरद ने तल्लाक दे दिया फिर भी बहू की सिंगार करने की साध देखो। पोंछ डाल, मैं कहती हूं, पोंछ डाल मांग का सिंदूर !"

"ना, मैं नहीं पोंछूंगी," मालती अपने संकल्प पर दृढ़ थी।

"अरी हरामिन, मुंहझौंसी, खानगी की बेटी," बिंदी गुर्रा उठी, "फिर बात टालती है ? एइ चिंती, एइ मेनका मेरा हुक्म है, लौंडिया के दुल्हन बनने के सौख को मेट दे। पोंछ डाल इसकी मांग का सिंदूर।"

मेनका ने कहा, "क्यों झगड़ा बढ़ाती हो दीदी ? मां की बात मान लो।"

मालती ने कहा, "ना, मैं नहीं पोंछूंगी।"

"अरी, तुमलोग खड़ी क्यों हो ?" विंध्यवासिनी कर्कश-स्वर में चीखी जबरदस्ती पोंछ डालो !"

कुछ लड़कियां मालती पर कूद पड़ीं। मालती ने रोकना चाहा, पर इतनी सारी ईर्ष्या से धधकती लड़कियों के आगे उसकी कहां तक चलती ? वह ज़मीन पर गिर पड़ी। हाथ-पांव मारे, पर पार नहीं पा सकी। लड़कियों ने उसके हाथ-पांव दबोच लिए और आंचल से घिस-घिसकर उसकी मांग का सिंदूर पोंछ डाला। इसी धमाचौकड़ी में मालती के हाथ की शंख की चूड़ी भी खट् से टूट गई। विंध्यवासिनी के कानों में यह आवाज़ जाते ही वह बोली, "अच्छा हुआ संख की चूड़ी टूट गई। दूसरे हाथ वाली बी

तोड़ डालो। चूर-चूर कर दो।"

मेनका ने झटपट आज्ञा का पालन किया।

विध्यवासिनी ने कहा, "अरे, उसकी लोहे की चूड़ी भी खोल लो।"

लड़कियों ने जोर लगाकर जबरदस्ती वह भी उतारी। खींच-तान में मालती का हाथ कट गया।

अब विध्यवासिनी ने सबसे बड़ा प्रहार किया। बोली, "जोगी मेनका छोकरी को धोती पेना दे, साड़ी खोल ले। उसका विधवा का भेस पूरा हो जाए। कायदा तो पालना ई होगा। इधर खूंटी पर बाबू की एक काली किनार की धोती टंगी है। वई पैना दे मेरी रानी बिटिया।"

मालती की आंखों में आंसू उमड़ रहे थे। पर वह रोई नहीं, हांफने लगी। लड़कियों ने तब तक उसकी साड़ी खोल डाली थी, वह केवल पेटी-कोट-ब्लाउज पहने खड़ी थी। मेनका एक तह की हुई धोती ले आई।

मालती ने कोई बाधा नहीं दी। लड़कियों ने उसे धोती पहना दी, साड़ी की तरह।

वह रुंधे स्वर में बोली, "बहुत अपमान तो सहा है मां। तुम और अपमान क्यों कर रही हो?"

"शरम नईं आती!" विध्यवासिनी गरज उठी, "मा का सिर नीचा कर दिया। सारे समाज में थू-थू हो रई है, बिंदी वाड़ीवाली की ऊंची नाक नीची हो गई है। जो बिंदी वाड़ीवाली कब्भी-बी नईं हारी, एक साले धोंगेबाज छोकरे के आगे उसे हार माननी पड़ी? किसके कारन? इस ढीठ, बेअदब लड़की के कारन। समाज में मूं दिखाने लायक नईं रई।"

मालती बोली, "तुम्हारा इतना अपमान अगर मेरे ही कारण है, तो आज से तुम्हारे साथ मेरे सारे संबंध टूटते हैं। तुम्हारे इस घर में मैं अब एक पल भी नहीं रहूंगी।"

बिंदी वाड़ीवाली बोली, "जाएगी कहां रे छोकरी! भरतार का दर-वाजा तो बंद है। अब अगर मां का घर बी छोड़ेगी तो सड़क पर बसेरा करना होगा।"

"वह भी अच्छा, पर तुम्हारे इस नरककुंड में अब एक घड़ी भी नहीं," मालती इन शब्दों के साथ उस कमरे से निकल आई।

विंध्यवासिनी चीखने लगी, "अरी, मत दिखा इतना तेज ! कल ही वकीलबाबू को बुलाकर विल बना दूंगी। एक फूटी कौड़ी वी नई मिलेगी तुझे !"

मालती जवाब दिए बिना दनदनाती हुई घर से निकल गई।

निकल तो आई, पर अब जाए कहां ? शरीर पर विधवा का वेश पास एक पैसा नहीं, कहां जाए ? जान-पहचान तो अनेकों के साथ है, पर सारा मान संभ्रम खोकर वह दीन-दुखी की तरह, किसके घर जाकर आश्रय ले ?"

एक चबूतरे पर बैठ गई वह। देह तोड़ती हुई रुलाई उमड़ आई। आंचल से मुंह ढककर वह फफक-फफककर रो पड़ी। दो-चार राह चलते लोग इकट्ठे हो गए। कौतूहली दर्शक फुसफुसाने लगे, "लड़की रो क्यों रही है जी ?"

एक बूढ़ी बोली, "हाय बचिया रे, इस कच्ची उमर में ही सिंदूर पुंछ गया। रोएगी नहीं भला ?"

किसीने पूछा, "तुम रो क्यों रही हो बेटी ? क्या हुआ है ?"

मालती आंखें पोंछकर रुंधे स्वर में बोली, "मुझे कुछ भी नहीं हुआ है, कुछ भी तो नहीं हुआ है।"

वह अचानक उठकर वहां से चल दी।

सहसा ध्यान आया, प्रसाद पाल के धोबीघर पर क्यों न जाए ? आपत्ति-विपत्ति में प्रसाद दा ने उसकी कई बार मदद की है। इस समय भी उससे सलाह करने की जरूरत है।

तेजी से वह प्रसाद पाल की डाइंग-क्लीनिंग शॉप की ओर चलने लगी।

शिरीष गुछाइत लेन के मुंह पर ही थी प्रसाद पाल की 'ग्रेट ईस्टर्न डाइंग क्लीनिंग कंपनी।' दूकान छोटी-सी थी, पर साइन बोर्ड बड़ा था। दो दरवाजे थे। कांच के शो-केस, काउण्टर और अलमारियों से दूकान जगमगा रही थी। धुले हुए कपड़े वहीं रहते थे। पीछे एक छोटी-सी कोठरी थी। वहां मैले कपड़े जमा होते थे। धोबी आकर वहीं से कपड़े ले जाते थे। प्रसाद के चेले जरूरत के अनुसार वहीं बैठकर सलाह-मशविरा करते

थे। छक्कू नाम का एक कम उम्र का छोकरा प्रमाद का एकमात्र सहकर्मी था। वह कपड़े जमाता संवारता था। बाकी सब काम प्रमाद अपने हाथों से करता था—हिसाब-किताब सब। दूकान छोटी होने पर भी प्रमाद का कारोबार अच्छा ही चलता था। इस निषिद्ध मुहल्ले में छवि वाड़ीवाली के बेटे प्रसाद के अनेक पृष्ठपोषक थे।

तब सध्या का अंधेरा घिर आया था। गली की बत्तियां जलने लगी थीं। 'तृप्ति' कैफे के सामने ग्राहकों की भीड़ थी। गलियों में भी सरगर्मी होने लगी थी। शाम से आधी रात तक मुहल्ले की गलियां गुलजार रहती हैं। सड़क पर कूड़े का पहाड़ खड़ा था। इधर-उधर लड़कियां ग्राहक फंसाने के लिए सजी-धजी खड़ी थीं। किसीने साड़ी पहन रखी थी, किसी-ने सलवार-कमीज, किसीने घाघरा। यौवनपुष्ट शरीरों में भुलाने-बहकाने की क्षमता थी। जो सीक-सलाई थीं, वे भी पोशाक-सज्जा से, प्रसाधन-वैचित्र्य से छबीली दिखाई देने की कोशिश कर रही थीं। इसी बीच कुछ ग्राहक चक्कर लगाने लगे थे। सभी उम्रों के समर्थ लोग आते-जाते थे। एक बूढ़े सज्जन (?) ने तो बिलकुल नजदीक आकर अनुचित प्रस्ताव किया। मालती बिना कुछ कहे-सुने तेजी से प्रसाद के धोबीघर की ओर बढ़ चली।

नियोन की नीली रोशनी से दूकान जगमगा रही थी। वहां कोई भी खरीदार नहीं था। प्रमाद हिसाब का रजिस्टर लिए बैठा था। छक्कू पीछे खड़ा-खड़ा मैले कपड़ों में उलझ रहा था।

मालती को विधवा के वेश में देखकर प्रमाद चौंककर रह गया। "बात क्या है ?" प्रमाद ने पूछा, "तुम्हारा यह वेश ?"

"सब बताती हूं," मालती बोली। फिर छक्कू की तरफ इशारा करके जाहिर किया कि उसके सामने बताना नहीं चाहती।

प्रमाद ने पूछा, "गरम चाय पियोगी ?"

"सिर्फ चाय ही नहीं," मालती ने कहा, "खिला-पिला ही रहे हो, तो पेट भरकर कुछ खिलाओ प्रमाद दा। दोपहर से कुछ भी नहीं खाया है।"

प्रमाद ने हांक लगाई, "छक्कू, 'तृप्ति' कैफे से झटपट दो कप चाय

और दो मटन कटलेट ले आ। मैनेजर से कहना, अच्छा माल दे, परसाद भैयाने कहा है। हां, मालती, मिठाई खाओगी ? एइ छकू, सुभद्रा मिष्ठान भण्डार से दो राजभोग लेते आना। ले यह दस रुपये का नोट। ठीक से हिसाब करके लाना।"

छकू उत्साह से चल पड़ा।

"अच्छा ही हुआ। आज मेरे ऊपर से मानो तूफान गुज़र गया है।"

"हुआ क्या, यह तो बताओ," प्रसाद ने कहा, "इतनी भूमिका किस बात की है ?"

मालती ने संक्षेप में सारी घटना बता दी।

सुनकर प्रसाद चिंतित होकर बोला, "वाकई, बड़ी मुसीबत पड़ी आज तुम्हारे ऊपर। अब क्या करोगी ? जाओगी कहां ?

"वही तो सोच रही हूं," मालती ने कहा।

"दो-चार दिन में मौसीजी का गुस्सा जरूर शांत हो जाएगा। पर इन दो-चार दिन भी रहोगी कहां ? मां के मकान में एक कमरा कुछ दिन से खाली है, किराएदार नहीं है कोई। वहां रह सकती हो कुछ दिन। हां, आस-पास के कमरों में लड़कियां रहती हैं।"

"ना, ना, मैं किसीके घर में नहीं रहना चाहती," मालती ने कहा; "अगर किसी होटल में इंतज़ाम हो सकता···लेकिन उसमें तो खर्च बहुत होगा।"

"वह तो तुम मुझसे उधार ले सकती हो, पर इतनी रात को सुविधानुसार होटल कहां मिलेगा ? एक काम करता हूं। तुम खा-पी चुको। तब दूकान बंद करके तुम्हें लेकर सियालदह चलता हूं। देखूं, शायद किसी मुसाफिरखाने में जगह मिल जाए।"

मालती बोली, "इतना झंझट क्यों करोगे ? आज की रात मैं तुम्हारी इस दूकान की पीछेवाली कोठरी में ही रह जाती हूं। तुम्हें कुछ असुविधा होगी क्या ?"

"मुझे भला क्या असुविधा होगी ?" प्रसाद बोला, "मैले कपड़ों की बदबू के मारे तुम्हारा ही टिकना मुश्किल होगा।"

"दूकान बंद होने पर इस लंबी टेबल पर भी मैं आराम से सो सकती

हूं," मालती ने कहा, "और मकान-मालिक का संडास-गुसलखाना तो तुम्हारी दूकान के पीछे ही है।"

"यह तुमसे नहीं होगा," प्रमाद बोला, "तुम्हें बड़ी तकलीफ होगी।"

"एक रात की तो बात है," मालती बोली, "समझ लूंगी, किसी स्टेशन के वेटिंग-रूम में रात बिता रही हूं।"

"तुम अगर रह सको, तो मुझे आपत्ति नहीं है। सुबह दस के पहले तो वैसे भी दूकान नहीं खोलना है। मुझे कोई दिक्कत नहीं होगी।"

"चलो, आज की रात के लिए तो चिंता मिटी," मालती आश्वस्त होकर बोली।

छक्कू खाने-पीने का सामान ले आया। मालती बोली, "इतना सब मैं अकेले कैसे खाऊंगी? तुम भी खाओ प्रमाद दा।"

"अच्छा, अच्छा, मैं एक कप चाय ले लेता हूं।"

"यह नहीं होगा। तुम भी लो। और मैं राजभोग नहीं खाऊंगी। ये दोनों छक्कू ले ले। उसने मेहनत भी बहुत की है, है ना?"

"नहीं मुनू दी," छक्कू झेंपता हुआ बोला, "मैं ये सब नहीं खाता।"

"छक्कू," प्रमाद ने कहा, "देख आ तो, पीछे का नहानघर खाली है या नहीं? हो, तो हौज से एक बाल्टी पानी निकालकर रख दे। और अजित की दूकान से फटाफट कोई अच्छा नहाने का साबुन ले आ। तेरी मुनू दी हाथ-मुंह धोएगी।"

छक्कू हुक्म की तामील करने दौड़ पड़ा।

"तुम्हें यह वेश अभी बदलना होगा मुनू," प्रमाद ने कहा, "यह मुझे बहुत बुरा लग रहा है।"

"पर मेरे पास कपड़े कहां है?" मालती विवृत होकर बोली, "मैं तो तन के कपड़ों में ही निकल आई हूं।"

"धोबी के घर में कपड़ों की क्या कमी?" प्रमाद बोला। एक पैकेट की डोरी खोलकर उसमें से धुली, इस्तरी की हुई नीली साड़ी, पेटीकोट, बॉडिस और ब्लाउज निकालकर उसे दिए। एक धुला हुआ तौलिया भी दिया। मालती हिचकिचा रही थी।

प्रमाद बोला, "तुम्हें कोई गंदी चीज दे सकता हूं क्या? ये मेरी दीदी के

कपड़े हैं। यहां धुलने के दिए थे। दो-चार दिन बाद लौटाने से भी चलेगा। तुम्हें ये फिट भी बैठेंगे। नहा-धोकर आकर आराम से खाओ। देर मत लगाना, चाय ठण्डी हो जाएगी।"

छक्कू साबुन ले आया। मालती अब और नहीं हिचकिचाई। सब लेकर स्नानघर में चली गई।

सिर्फ शरीर पर ही पानी नहीं डाला। जाड़े की रात होने पर भी सिर पर ठण्ठा पानी डालकर मालती को बड़ा आराम महसूस हुआ। झटपट स्नान करके, बाल फैलाकर वह दूकान वाले हिस्से में आ गई। प्रसाद किसी ग्राहक को धुले हुए कपड़े लौटा रहा था। पैसे कैशबक्स में रखकर बोला, ' लोगों को भी टाइम-बेटाइम का कुछ होश नहीं है। जब-तब आ जाते हैं तंग करने।"

उस आदमी के जाने पर मालती काउण्टर के पीछे आ गई। प्रसाद ने कहा, "उतारे हुए कपड़े रखो। मैं कल ही अर्जेण्ट धुलवा दूंगा।"

मालती प्रसाद की कुर्सी पर बैठकर खाने लगी। प्रसाद सड़क की ओर पीठ करके काउण्टर पर ही बैठ गया। दोनों आपस में बांटकर खाने लगे। खाते-खाते कोई खास बात नहीं हुई।

गली में से पुलिस की एक गाड़ी मुहल्ला कंपाती हुई निकल गई। उसके कर्कश हार्न से संकरी गली गूंज उठी। यह आवाज सुनकर शिकारी लड़कियां अपने-अपने घरों में जा छिपीं। एक लड़की चकराकर खड़ी ही रह गई। एक सिपाही सटाक् से गाड़ी से उतरा और चटपट उसे गाड़ी पर चढ़ा दिया। लड़की अश्राव्य गालियां बकने लगी, काटने-नोचने लगी। पर उस बलिष्ठ देह के आगे उसकी एक न चली। ये रोज की बात थी। रोज ही थोड़ी-बहुत धर-पकड़ होती है, नहीं तो शांतिरक्षकों की इज्जत नहीं रहती। थाने के जमा-खर्च में तो घाटा पड़ता ही है, ऊपरी आमदनी भी बंद हो जाती है। बाड़ीवालियां उपयुक्त दक्षिणा और जुर्माना देकर अपनी किरायेदारों को छुड़ा लाती हैं। यह भी व्यवसाय का अंग ही है।

पुलिस की गाड़ी जाते ही लड़कों का एक दल प्रसाद की दूकान पर आया। ये मुहल्ले की युवा-सेना थी—प्रसाद की भक्त। भोस्ता, जेदो, झण्टा, घंण्टे, हिटलर और भी कई लड़के। शोर मचाते हुए उन्होंने अभि-

योग लगाया, "पुलिस की ज्यादतियां बढ़ती ही जा रही हैं। अब तो लगता है, दो-चार पंतुए फोड़े बिना साले ठण्डे नहीं होंगे। पंतुए, अर्थात् बम। पुलिस जब-तब लड़कियों को ही नहीं पकड़ती, शरीफों को भी 'हैरेस' करती है। जरा खबर न ली गई तो हुज्जत बढ़ती ही जाएगी।"

प्रसाद ने कहा, "पंतुओं की बात छोड़। पकड़ा गया तो लंबी मीयाद की हो जाएगी। उस बार तो बम बनाने में मन्टे का हाथ ही उड़ गया था। कितनी परेशानी हुई थी उसे बचाने में। उससे तो आसान रास्ता है, कुछ-एक हांडी बढ़िया, असली पंतुए मालिकों की नजर करना। इसके लिए पैसा इकट्ठा करना होगा।"

हिटलर ने कहा, "इतने पर भी अगर हुज्जत बंद नहीं हुई तो दमा-दम कुछ पटाखे झाड़ देंगे। उसमें हाथ भी नहीं उड़ेगा, और लंबी मीयाद भी नहीं होगी। हद से हद होगी—थाने में पिटाई, बिजली के झटके और कुछ दिनों की कैद।"

प्रसाद बात पलटने के लिए बोला, "जानते हो, तुमलोगों की झुनू दी आज रात इसी दूकान में रहेगी।"

भोन्ता बोला, "क्यों? छिरकली के हाथ से बचने के लिए?"

"हद् बेवकूफ," प्रसाद बोला, "तेरी झुनू दी बम-पटाखे झाड़ती है या छिनालपना करती है? वह अच्छी लड़की है।"

"वह तो पता है," भोन्ता ने कहा, "इसीसे तो बात समझ में नहीं आई।"

प्रसाद ने कहा, "मां से इनका झगड़ा हो गया है।"

भोन्ता बोला, "हुआ है तो होने दो। जाकर ससुराल में रहें।"

प्रसाद ने कहा, "वह दरवाजा भी बंद है। आज के मुकदमे में इनका तलाक हो गया है।"

हिटलर ने कहा, "तभी मांग में सिन्दूर नहीं दिखाई दे रहा है, न हाथों में शंख की चूड़ियां। झुनू दी, एक बार हुक्म दो, हमलोग तुम्हारी ससुराल के दरवाजे तोड़ आएं। मुकद्दमा-उकद्दमा हम नहीं मानते। बस एक बार कह दो, हम उस साले बहनोई को हाथ-पांव बांधकर लाकर तुम्हारे पैरों में डाल देंगे।"

इतने दुख में भी मालती को हंसी आ गई। बोली,"कोई ज़रूरत नहीं है बहादुरी दिखाने की हां रे हिटलर, उस बार क्लब के केशव दत्त बाबू को रॉड से किसने मारा था रे ?"

"बताऊं ?" हिटलर सिर खुजाने लगा।

"मुझे भी नहीं बताएगा ?" मालती ने कहा, "मैं तो तुम लोगों की दीदी हूं ना।"

"नेपोलियन," हिटलर ने कहा।

"नेपोलियन ?" झूनू हैरत से बोली, "नेपोलियन को मरे तो ज़माना हो गया।"

"धत्, वो तो नौटंकी का नेपोलियन था, "हिटलर ने कहा, "ये हमारा नेपो है—निरमेंदर। हम उसे नेपोलियन कहकर ही पुकारते हैं। जब तुमने परसाद दा को बताया था कि क्लब के उन कप्तान बाबू ने थियेटर में तुमसे ज़बरदस्ती करने की कोशिश की, तो सुनते ही हम लोगों का खून खौलने लगा। झूनू दी का अपमान ! कप्तान हो या और कोई, कुत्ते के बच्चे के होश ठिकाने लगाने ही होंगे। हमलोगों ने तय किया, उसकी अच्छी खबर ली जाएगी। ताक लगाए रहे हम। उसके आफिस का पता लगाया। उसे पीछे-पीछे फॉलो किया। एक बार अकेले में मिला, ब ऽऽ स! साला नेपोलियन गुस्से से पागल हो रहा था—धम् से सिर पर रॉड चला दी। उस आदमी ने हाथ से वार रोक लिया, नहीं तो सिर हो जाता फट्ट ! इन वन सेकेण्ड यमराज के घर पहुंच जाता।"

"उस आदमी को मारकर ठीक नहीं किया भैया," मालती बोली।

हिटलर बोला, "तुम नाराज़ हो गईं झूनू दी। अच्छी बात है, हम लोग पराश्चित करते हैं। एक बार उस बहनोई साले को टांगकर लाकर तुम्हारे पैरों पर डाल देते हैं। साला जब तक तुम्हारे पैर पकड़कर, तुम्हें मना-मनूकर घर नहीं ले जाए, उसकी जान नहीं छोड़ेंगे हम।"

"रहने दे भैया," मालती म्लान हंसी हंसकर बोली।

"भई तुमलोग अब और झंझट मत बढ़ा देना," प्रसाद ने कहा, "जाओ अपने-अपने घर लौट जाओ। फिर हल्लागाड़ी ने आकर तुम लोगों में से किसीको पकड़ लिया, तो मुझे जमानत के लिए थाने दौड़ना

पड़ता।"

"अभी से ही घर लौट जाएं?" सन्ध्या ने कहा, "मां सोचेंगी, इतनी जल्दी घर लौट आया है, जरूर बेचारे को बुखार-उखार आ गया! चल कड़वी-दवाई पिला देंगी।" सब के सब ठठाकर हंस पड़े।

जैदी ने कहा, "चल रे चल, हम लोग भोला के घर के चबूतरे पर बैठकर कुछ देर गप्प लड़ाएं।"

हिदायत ने कहा, "जा तो रहे हैं, पर आज सारी रात हम लोग बारी बारी से इस कोठी पर पहरा देंगे। मुनु दी रहेंगी ना यहां। कोई बहनोई जी अगर इधर-उधर ताक-झांक करें तो साले की खोपड़ी तोड़ देंगे।"

सिर्फ वही रात नहीं, और भी कई रातें मालती ने अकेले उस कोठी में बिताईं। दिन का अधिकांश समय वह सड़कों और पार्कों में घूमकर बिता देती थी। रात होने पर इस दुकान में आश्रय लेती थी। कभी-कभी प्रसाद का हिसाब का रजिस्टर भी सम्भाल लेती थी। लड़कों का झुंड आकर तरह-तरह के हंसी-मजाक से वातावरण को गुलजार रखता था। उनमें से कोई-कोई रात को मुनु दी की पहरेदारी भी करता था। हांक लगाकर बंद दरवाजे के पास से भी वे जता देते कि वे यहां हैं।

एक दिन प्रसाद ने कहा, "जानती हो मुनु, मेरा वकील कह रहा था, मुकदमे का एकतरफा फैसला होने पर उसे चुनौती दी जा सकती है। अभी भी समय है, मुकदमे की नए सिरे से सुनवाई हो सकती है। इसके लिए दरख्वास्त जरूर देनी पड़ेगी, रुपये भी खर्च होंगे।"

मालती शांत भाव से बोली, "अब सब खत्म हो गया है, फिर क्यों कुरेदकर धूल उड़ाई जाए? मैं अब मुकदमा नहीं लड़ूंगी प्रसाद दा।"

प्रसाद कुछ देर चुप रहा, फिर बोला, "कल सुबह रास्ते में नकुल बाबू से मुलाकात हो गई थी। पांच नंबर घर से निकल रहे थे—आंखें लाल सूजी हुईं। लगा सारी रात [illegible] करते रहे थे।"

मालती बोली, "रहने दो ये सब बातें। पराई चर्चा से मुझे क्या लेना?"

प्रसाद बोला, "पूरी बात तो सुनो, नाराज क्यों हो रही हो ? तुमसे पूछा नहीं था, पर मैंने उनसे कहा, "ये सब क्या हो रहा है नकुलबाबू ? मीनू जैसी लड़की को तुम लोगों ने त्याग दिया ? तलाक करवा दिया ?" उसने कहा, "तलाक हो गया तो क्या हुआ, शादी फिर से हो सकती है।" मैंने कहा, "मीनू अब भी सहदेव से प्रेम करती है।" नकुल ने कहा, 'तो सहदेव के साथ ही फिर से शादी हो सकती है।' मैंने कहा, 'ये क्या बात हुई ?' नकुल बोला, 'एक बार मैंने ही शादी करवाई थी, अगर मैं चाहूं तो दुबारा भी करवा सकता हूं।' मैंने पूछा, 'सो कैसे ?' वह बोला, 'बिंदी ठकुराइन अगर एक मकलागर मेरे नाम लिख दें, तो मैं फिर बात चलाऊं।' 'गुस्से में आकर मैंने साले नकुल को वह वह गालियां सुनाई हैं, कि याद रखेगा। फिर भी उसकी बात सोच देखने लायक है।"

"इस आदमी पर फिर से विश्वास करूं ?" मालती बोली।

प्रसाद ने कहा, "ये बात तो सही है।"

रविवार को प्रसाद की दुकान बंद थी। वह किसी काम से कलकत्ता के बाहर गया था। दुकान का दरवाजा बंद करके मालती ने सारा दिन अंदर ही बिता दिया।

शाम होते-होते थका-हारा प्रसाद लौटा। हताश-भाव से मालती की ओर देखकर बोला, "ना, नहीं हो सका।"

मालती ने पूछा, "क्या नहीं हो सका प्रसाद दा ?"

"वह आदमी किसी भी तरह राजी नहीं हुआ।"

"कौन आदमी ? किस बात पर राजी नहीं हुआ ?"

प्रसाद बोला, 'नकुलबाबू की बात मैं ऐसे ही नहीं टाल सका। सोचा, एक बार जाकर तो देखूं। इसीलिए तुम्हें बताए बिना आज मैं बस से मुरलागाम चला गया था।'

" 'उनसे' मिले ?" मालती उत्सुकता को दबाती हुई बोली, "कैसे हैं 'वे' ?"

"अच्छा ही है," प्रसाद ने कहा, "तुम्हारी बात उठाते ही टाल गया। आइ आर एट धान उपजाकर प्राइज जीता है, स्कूल को दसवीं क्लास तक की स्वीकृति मिल गई है—यही सब बक-बक करता रहा।

आखिर मैंने उसे दबाकर पकड़ा, कहा, 'तुम मुनू से फिर शादी कर लो।' उसने कहा, 'दादा, टूटी मटकी में जितना भी पलस्तर लगाओ, वह जुड़ेगी नहीं।'

"तुम मेरे लिए अपमानित होने क्यों गए प्रसाददा?" मालती कृतज्ञ भाव से बोली।

"इसमें मान-अपमान की क्या बात है?" प्रसाद ने कहा, "लेकिन सहदेव अगले हफ्ते एक लॉरी किराये पर लेकर दहेज का सारा सामान मय साइकिल के लौटा रहा है। दहेज के नकद रुपये तो प्राय: सभी खर्च हो गए हैं, वह थोड़ी-सी जमीन बेचकर वह रकम भी तुम्हारी मां को लौटा देगा।"

"हमारा कोई भी ऋण नहीं रखेगा वह अपने ऊपर?" मालती कुछ उत्तेजित होकर बोली।

प्रसाद चुप रहा।

कुछ दिन बाद हारू मिस्तर स्वयं आ पहुंचा। इधर-उधर करके वह मालती से बोला, "मुनू बिटिया, ये क्या अच्छी बात है? तुम्हारे जैसी लड़की इतने दिन से धोबीघर में रह रही है।"

"क्यों? मैं तो मजे में हूं?" मालती बोली।

"ऐसा भी कभी होता है?" हारू ने कहा, "तुम्हारा यह सुख में पला शरीर, ऐसी जगह कहीं रह सकता है? तुम लौट चलो बेटा। मैं तो समाज में मुंह नहीं दिखा पा रहा हूं।"

मालती बोली, "यह भी खूब रही। 'वे' कहते थे, 'मैं तुम्हारी वजह से समाज में मुंह नहीं दिखा पा रहा हूं।' मां ने कहा, 'तेरी वजह से समाज में मुंह नहीं दिखा पा रही हूं।' और अब तुम भी वही बात कह रहे हो। मैं करूं तो क्या करूं अब?"

हारू ने कहा, "वह सहदेव तुम्हें त्याग सकता है, पर मैं कैसे त्यागूं? ठीक है, तुम्हारे साथ मेरा खून का रिश्ता न सही, पर एक बंधन तो है। तुम्हारी मां का मैं—वह हूं। तुम्हारे नाम से मेरा कुलनाम जुड़ा है।

वस, वही एकबार वह मेरे पास आई थी और इसी एकबार की बातों उसने अपना हृदय खोलकर रख दिया था।

कई महीनों बाद, एक विशेष उपलक्ष्य में मैं विपिन यश लेन में उन गों के घर गया। पर मालती मुझसे मिलने नहीं आई। कह भिजवाया ;, "उनसे मिलने में मुझे शरम आती है, मैं मिल नहीं सकूंगी।"

ऽई महीनों बाद की बात है। उसीसे कहानी का उपसंहार करता हूं।

मैंने कुछ मित्रों से मालती के उपयुक्त कार्य मिले तो बताने को कहा। उनमें से कोई भी सफल नहीं हुआ। इसीलिए मैंने भी मालती से कोई संपर्क नहीं किया। वह भी मुझसे मिलने नहीं आई। इसके अलावा कार्याधिक्य के कारण मैं मालती की बात लगभग भूल ही चला था।

अचानक एक दिन एक अपरिचित नवयुवक आया। गोरा रंग, भरा-भरा बदन, हृष्ट-पुष्ट, मझोला कद। चेहरा कुछ पहचाना-पहचाना-सा लग रहा था। उसने आकर नमस्कार करके कहा, "मुझे पहचान रहे हैं? मैं प्रसाद पाल हूं।"

"अब याद आया, मालती से उसका नाम कई बार सुना है। उसने विपत्ति-आपत्ति में मालती की बहुत सहायता की है। वह भी एक बाड़ी-वाली का बेटा है। पर इस बात को मैं विशेष महत्त्व नहीं देता। मैंने उसे बैठने को कहा। फिर शिष्टाचारवश पूछा, "क्या बात है भाई?"

'हमारे मुहल्ले में सार्वजनिक कालीपूजा हो रही है," प्रसाद ने कहा, इस बार हमने इसे खूब धूमधाम से मनाना तय किया है। हम चाहते हैं, आप उसकी उद्‍घाटन सभा के प्रधान अतिथि बनें।"

"कब होगी वह?"

"कई लोग पहले ही कर लेते हैं," प्रसाद ने कहा, "पर हमलोग पूजा के दिन की शाम को ही सभा करेंगे। ठीक साढ़े छः बजे। उसके बाद पंडाल में एक जलसा होगा। आप आएं तो हमें खुशी होगी।"

मैंने डायरी देखकर कहा, "ठीक है, ये समय मेरा खाली है। मैं आऊंगा।"

दिन गुस्से में तुझे पता नहीं क्या-क्या कह गई, मुझे होश नहीं था। इसके लिए उस मेनका की बच्ची को मैंने खूब मारा है। छोकरी ने मेरी बात मानकर तेरी ऐसी दुरदशा क्यों की ?"

मालती भी मां से लिपटकर रो पड़ी थी।

विन्ध्यवासिनी ने आंखें पोंछकर कहा, "यह सब खाट-कबाड़, यह सामान तेरा ही है। जो पसंद हो, रख लेना, जो इच्छा हो बेच देना।"

मालती बोली, "वह सब होता रहेगा। दो दिन बाद सोच-विचार करके सब किया जाएगा।"

फिलहाल नीचे के दालान में सारा सामान रखवा दिया गया। अलमारी में मालती के सारे कपड़े-गहने मौजूद थे। सहदेव ने अपने हाथों से लिस्ट बना दी थी। अपने बड़े भाई पर उसे विश्वास नहीं था। कहा था, प्राप्ति के प्रमाणस्वरूप मालती के हाथ की सही करवा लाए। विन्ध्यवासिनी ने स्वयं सारी लिस्ट मिला ली थी। सब ठीक था। यह उसने जरूर कहा, "जमाई ने अपने सारे कपड़े रख लिए हैं। हां, घड़ी और अंगूठी जरूर लौटा दी है।" मालती ने मन ही मन सोचा, 'मां का दिल इतना छोटा क्यों है ? हर समय कौड़ी-कौड़ी का हिसाब।' मालती ने सहदेव के हाथ की लिखाई वापस नहीं लौटाई। अपने हाथों उसकी एक प्रतिलिपि बनाई। इसीपर सही करके नकुल के हाथों में उसने लौटाया।

नकुल के चले जाने पर मालती ने मां से कहा, "एक बात कहूं ? पहले कहो कि नाराज नहीं होओगी।"

"क्या बात है रे ?" दिदी ने खुश होकर पूछा।

"सोच रही हूं, साइकिल प्रसाददा को दे दी जाए तो कैसा रहे ?" मालती ने कहा।

दिदी मुंह बनाकर बोली, "जैसे मिजाज हैं उसके, लेना मंजूर करे तब है।"

"अच्छा मैं एक बार पूछकर तो देखूं," मालती ने कहा।

मां के साथ सुलह-सफाई हो जाने पर भी मालती को शांति नहीं मिली। इस बार अशांति का सूत्रपात किया, हाउस मिस्त्रर ने।

प्राइवेट मैट्रिक की परीक्षा देने का इरादा करके मालती ने किताबें

खरीदकर फिर पढ़ाई में मन लगाया। स्कूल की पुरानी सहेली कावेरी ने वहुत पहले ही बी० ए० की पढ़ाई शुरू कर दी थी, पार्ट-वन पास भी कर चुकी थी। मालती भी नियमित पढ़ती रहती तो यहां तक पहुंच जाती। उसके साथ संपर्क करके मालती पढ़ाई का ढंग समझ ले रही है। अपने कुछ तैयारी कर लेने के वाद प्राइवेट टयूटर रखने का इरादा है उसका।

पर मुसीवत आई हारू मित्तर की तरफ से। हारू मित्तर नहीं चाहता था कि मालती घर वैठकर केवल पढ़ाई-लिखाई करे। वह गा सकती है, नाच सकती है, अभिनय कर सकती है। ये गुण जंग खा रहे हैं। यह उचित नहीं है। मालती फंक्शनों में जाए, नाचे, गाए, एक्टिंग करे—इसीसे उसे संसार में थोड़ा सहारा मिलेगा, यही था हारू मित्तर का प्रस्ताव।

प्रस्ताव तर्कसंगत था। क्लव में एक नए नाटक की तैयारी हो रही थी। वेणीदा गए थे, मालती को हीरोइन का पार्ट देना चाहा था। कट-कटाकर दो सौ रुपये और यातायात का खर्च दक्षिणा में दिया जाएगा। मालती तैयार नहीं हुई। वेणीदा नकद तीन सौ तक तैयार हो गए थे। पर मालती ने वह प्रस्ताव ठुकरा दिया। और भी कई क्लव और मर्चेण्ट ऑफिस संघ कई दिनों तक मालती के पास अपने प्रतिनिधि भेजते रहे। मालती ने कोई भी प्रस्ताव स्वीकार नहीं किया। हारू मित्तर ने हिसाव करके देखा, एक माह में मालती ने लगभग तेरह-सौ रुपये के कांट्रैक्ट खोए। वह गुस्से में गजवजाने लगा। यहां तक कि उसने विंध्यवासिनी से भी शिकायत की, पर उधर से उसे कोई समर्थन नहीं मिला। हारू मित्तर कुछ दिन चुप रहा।

कुछ दिन वाद वह एक प्रस्ताव लाया। केतकी प्रोडक्शंस नामक एक नई फिल्म कंपनी बनी है। सुना है, वे लोग ताराशंकर के उपन्यास पर फिल्म बनवाएंगे। एक साइड पार्ट के लिए मालती ट्रायल दे सकती है। पसंद आई तो वे मालती को काफी रुपये देंगे। मालती का मन भी ललचा गया था। वोली थी, "दो-एक दिन में सोचकर जवाव दूंगी।" पर अंत में उसने इस प्रस्ताव को नकार ही दिया था।

पर हारू मित्तर सबसे आखिर में जो प्रस्ताव लाया, उसे सुनकर मालती स्तंभित रह गई। श्रीवास्तव नामक एक उभरते हुए व्यवसायी ने

नया काम खोला है। पार्क स्ट्रीट पर उसका सजा-सजाया ऑफिस है। नाम है, फॉरेन एक्सपोर्ट का। बहुत-से बड़े-बड़े आदमियों के साथ व्यापार सम्पर्क है। हारू मित्तर के साथ भी इधर उसका परिचय बढ़ गया है। श्रीवास्तव एक होशियार रिसेप्शनिस्ट की तलाश में था। मित्तरबाबू की लड़की की बात उठी तो वह लगभग तैयार हो गया। मालती की तस्वीर देखकर तो उसे नौकरी पर बहाल करने के लिए वह तत्पर हो उठा। काम हल्का था, और तनख्वाह भी अच्छी-खासी थी। साढ़े चार सौ से शुरूआत। इसके अलावा अलाउंस थे—कुल मिलाकर शुरू-शुरू में ही साढ़े छः सौ रुपये पड़ जाएंगे। प्रस्ताव सुनकर मालती बेहद उल्लसित हो उठी। विश्ववासिनी भी राजी थी। पर प्रसाद से बात करते ही वह बोला, "हारू मित्तर काइयां आदमी है। पहले मैं सब तलाश कर लूं, तब जवाब देना।"

प्रसाद एक दिन के अंदर ही जो खबर लाया, वह भयानक थी। श्रीवास्तव महा शैतान था। कारबार के बहाने वह कॉल गर्ल की दलाली करता है। ऑफिस उसका नाममात्र के लिए है। रिसेप्शन-रूम में सोफा-कम्-बेड रखा है। ऑफिस-रूम में भी दीवारों में घुसे हुए फोम-रबर के बेड हैं। वहां बहुत-सी आधुनिकाएं आती हैं। जो प्रसिद्ध लोग सम्मान की खातिर निषिद्ध मुहल्लों में नहीं आ पाते, उनमें से अनेक वहीं जाते हैं। वहीं मालती के लिए काम का प्रस्ताव लाया था हारू मित्तर।

मालती को हारू मित्तर पर गुस्सा आया। गुस्से की झोंक में बहुत-कुछ भला-बुरा कह गई। हारू मित्तर भी चुप नहीं रहा। बोला, "बैठे-बैठे मक्खियां तो भुटा रही हो। जवानी कितने दिन रहेगी? इसी उमर में कमाई नहीं की, तो और कब करोगी?"

"मेरे पिता कहलाते हो···" मालती उफनकर बोली, "यह गंदा प्रस्ताव लाते हुए तुम्हें लज्जा नहीं आई?"

"अच्छा मेरी सती-साध्वी की बेटी सीता-दमयंती रे!" हारू मित्तर विद्रूप करते हुए बोला, "आजकल तो कई असली बाप खुद खड़े होकर लड़की को पटाकर सफर से पैसा वसूलते हैं। मैं तो फिर मुंहबोला बाप हूं।"

मालती गुस्से को रोक नहीं सकी। उसने हारू मित्तर के गाल पर तड़ से एक तमाचा जड़ दिया।

"तुमने मुझे मारा ? तुमने मुझे मारा ?" हारू मित्तर सिर नीचा करके चला गया।

ये सब बातें किसी भी पक्ष ने विंध्यवासिनी को नहीं बताईं। मालती ने केवल इतना ही कहा, "वहां नौकरी नहीं करूंगी।"

कुछ दिन से मालती मास्टर की तलाश में थी। उसने अखबार में विज्ञापन भी दिया था, पर सही आदमी नहीं मिल रहा था। इस मामले में प्रसाद भी विशेष मदद नहीं कर सका।

हारू मित्तर ने एक दिन कहा, "एक बी० ए० पास लड़का है। पहले मास्टरी करता था, अब मर्चेण्ट ऑफ़िस में अच्छी नौकरी करता है। उसे जात्रा-थियेटर का भी शौक है। मालती तैयार हो, तो वह रोज़ आकर पढ़ा सकता है।"

आजकल मालती हारू मित्तर के किसी भी प्रस्ताव पर कान देना नहीं चाहती। फिर भी विंध्यवासिनी ने कहा, "एकबार मास्टर को आजमा कर देखने में हर्ज़ क्या है ?"

जिस शाम को नए मास्टर के आने की बात थी, उस दिन मालती ने पहले से ही अपने कमरे में पढ़ने की मेज़ पर किताबें जमा-सजाकर रख लीं। मेज़ पर अपने हाथों से काढ़ा हुआ एक मेज़पोश भी बिछाया। खुद भी साफ-सुथरे कपड़े पहनकर तैयार हो गई।

हारू मित्तर मास्टर को लेकर कमरे में घुसा। नवागत व्यक्ति को देखकर मालती स्प्रिंग की गुड़िया की तरह तड़ से उछल पड़ी। उसने बिगड़कर कहा, "यह क्या, केशवबाबू, आप यहां ?"

केशव ने कहा, "क्यों, तुम्हें पता नहीं था कि मैं आऊंगा ?"

"बिलकुल भी नहीं," मालती ने कहा, "मैं आपका मुंह भी देखना नहीं चाहती। जाइए, मैं कहती हूं, निकल जाइए !"

"यह कैसा व्यवहार है हारूबाबू ?" केशव गुस्से में बोला, "अपनी लड़की से अपमान करवाने के लिए ही मुझे बुलाया है ?"

हारू बगलें झांकता हुआ बोला "मुझे तो पता नहीं था कि आप लोगों

में पहले से ही जान-पहचान है। मुन्नू बेटी, केशव बाबू मिडल डाक्टर हैं. उनकी मास्टरी की योग्यता को एक बार परख करके देखो न जरा!"

मालती झनझनाकर बोली, "तुम चुप रहो, मैं इनके साथ बात कर रही हूं। केशव बाबू, आप सीधे-सीधे यहां से रवाना होते हैं, या मैं शोर मचाकर मुहल्ला इकट्ठा करूं?"

केशव भी छोड़नेवाला नहीं था। वह बोला, "लड़की से अपमान कराने के लिए ही क्या आपने मुझसे पांच-सौ रुपये घूस में लिए थे?"

"क्या मतलब?" मालती बोली।

"मुझसे तुम पढ़ोगी—याने बातचीत करोगी—इसके लिए तुम्हें तैयार करने की शर्त पर इन्होंने मुझसे पांच-सौ रुपये लिए हैं," केशव दृढ़ स्वर में बोला।

"झूठी बात है बिलकुल। मैंने तो पांच-सौ रुपये आपसे उधार लिए हैं समय आने पर चुका दूंगा," प्रतिवाद में हाफ मिस्तर ने कहा।

कौन सच्ची बात कह रहा है, समझना मुश्किल था। मालती चिढ़कर बोली, "मुझे कोई भी बात नहीं सुननी है। आप इसी पल यहां से दफा हो जाइए।"

बात बिगड़ती देखकर केशव टल गया। मालती चीखकर बोली "अगर फिर कभी मुझे तंग करने आए तो ऐसा इंतजाम करूंगी कि डंडा मारकर आपकी खोपड़ी खोल दी जाए।"

इसके बाद ही मेरे पास आकर मालती ने नौकरी खोज देने को कहा। कौन-सी नौकरी करेगी वह? इस भरी जवानी में उसे जहां-तहां तो भेजा नहीं जा सकता काम के लिए। इसके अलावा उसकी जो योग्यता थी वह भी आम नौकरियों के लायक नहीं थी। बेकारी की समस्या दिनोंदिन बढ़ती ही जा रही है। अच्छे-अच्छे लड़कों को ही काम नहीं मिलता तो मालती जैसी लड़की को कहां मिलेगा?"

अपनी असामर्थ्य पर मुझे दुख भी हुआ। फिर भी उसे तसल्ली देने के लिए बोला, "अच्छा,अगर किसी अच्छे काम का पता चला, तो तुम्हें खबर दूंगा।"

मालती चली गई।

बस, यही एकबार वह मेरे पास आई थी और इसी एकबार की बातों में उसने अपना हृदय खोलकर रख दिया था।

कई महीनों बाद, एक विशेष उपलक्ष्य में मैं विपिन यश लेन में उन लोगों के घर गया। पर मालती मुझसे मिलने नहीं आई। कह भिजवाया था, "उनसे मिलने में मुझे शरम आती है, मैं मिल नहीं सकूंगी।"

कई महीनों बाद की बात है। उसीसे कहानी का उपसंहार करता हूं।

मैंने कुछ मित्रों से मालती के उपयुक्त कार्य मिले तो बताने को कहा। उनमें से कोई भी सफल नहीं हुआ। इसीलिए मैंने भी मालती से कोई संपर्क नहीं किया। वह भी मुझसे मिलने नहीं आई। इसके अलावा कार्याधिक्य के कारण मैं मालती की बात लगभग भूल ही चला था।

अचानक एक दिन एक अपरिचित नवयुवक आया। गोरा रंग, भरा-भरा बदन, हृष्ट-पुष्ट, मझोला कद। चेहरा कुछ पहचाना-पहचाना-सा लग रहा था। उसने आकर नमस्कार करके कहा, "मुझे पहचान रहे हैं? मैं प्रसाद पाल हूं।"

"अब याद आया, मालती से उसका नाम कई बार सुना है। उसने विपत्ति-आपत्ति में मालती की बहुत सहायता की है। वह भी एक बाड़ीवाली का बेटा है। पर इस बात को मैं विशेष महत्त्व नहीं देता। मैंने उसे बैठने को कहा। फिर शिष्टाचारवश पूछा, "क्या बात है भाई?"

'हमारे मुहल्ले में सार्वजनिक कालीपूजा हो रही है," प्रसाद ने कहा, इस बार हमने इसे खूब धूमधाम से मनाना तय किया है। हम चाहते हैं, आप उसकी उद्घाटन सभा के प्रधान अतिथि बनें।"

"कब होगी वह?"

"कई लोग पहले ही कर लेते हैं," प्रसाद ने कहा, "पर हमलोग पूजा के दिन की शाम को ही सभा करेंगे। ठीक साढ़े छः बजे। उसके बाद पंडाल में एक जलसा होगा। आप आएं तो हमें खुशी होगी।"

मैंने डायरी देखकर कहा, "ठीक है, ये समय मेरा खाली है। मैं आऊंगा।"

प्रमाद ने पूछा, "हममें से कोई आपको लेने आए?"

मैंने कहा, "इसकी जरूरत नहीं है। विपिन यश लेन मेरी परिचित है।"

प्रमाद ने कहा, "मैं गली के मोड़ पर राह देखूंगा। उसके पास ही मैदान में पूजा होगी।"

मैं निश्चित समय से कुछ पहले ही चला गया। बड़ी धूमधाम से पूजा का आयोजन किया गया था। सड़क पर बत्तियों की कतार। रोशनी इस प्रकार की गई थी कि लगता था, प्रकाश की एक सुरंग बनी गई है। गेट भी दर्शनीय था, पंडाल भी विराट्। काली-प्रतिमा वृहदाकार थी—आदमी से लगभग डेढ़ा आकार। चेहरा भी अच्छा था। काली-प्रतिमा के दोनों ओर की राक्षसियां मानो निगलने को बढ़ी चली आ रही हों। पंडाल बड़ी सुरुचि से सजाया गया था। सजावटी कपड़ों की चुन्नटें ऐसी निपुणता से बैठाई गई थीं, कि वह शाही दरबार का कक्ष-सा लग रहा था। एक ऊंचे मंच पर पदाधिकारियों के बैठने की व्यवस्था थी, साथ ही जलसे का इंतजाम। सामने तीनेक सौ फोल्डिंग कुर्सियां लगी थीं।

लाउडस्पीकर पर फिल्मी गाने बज रहे थे। उन्हें दबाती हुई पटाखों और बमों की धूमधड़ाम सुनाई दे रही थी। सामने ढेर सारे छोटे बच्चे-बच्चियां चिचर-मिचर कर रहे थे। बीच-बीच में स्वयंसेवक उन्हें डपटते जा रहे थे। धक्कामुक्की पर काबू रखना ही मुश्किल था।

वहां पहुंचते ही मुझे सबने आदर से बैठाया। सभा शुरू होने में कुछ देर थी। सभापति आए। वे स्थानीय अध्यापक थे। कुछ देर उनके साथ कुछ इधर-उधर की बातें होती रहीं। उद्घाटन का समय आ गया। सबके सब व्यस्त होकर घूमने लगे। हर कोई लीडर था। दो-एक आर्टिस्ट आ पहुंचे थे। उन्हें बैठाने की व्यवस्था पास के ही एक घर में की गई थी। पंद्रह मिनट बीत गए। प्रमाद को बुलाकर कहा, "क्यों भई, और कितनी देर है?"

प्रमाद बोला, "अभी इंतजाम हो रहा है। देखिए ना, इतने कार्य-कर्ता हैं, पर काम के समय एक का भी पता नहीं। मुझे ही सब तरफ संभालना पड़ रहा है। एई माइकमैन, भई अब व्यवस्था करो।"

फिल्मी गाना खतम होते ही लाउडस्पीकर बन्द हुआ। माइकमैन माइक से उलझने लगा। फँ···फों···घरर-घरर—कई आवाजों के बाद माइकमैन चिल्लाया, 'माइक टेस्टिंग वन्—टू—थ्री—फोर···।'

"माइक रेडी," प्रसाद ने कहा, "अब आपलोग डायस पर चलिए।" मैं मंच पर चढ़ा। लोग नजर-बजर किए जा रहे थे। लड़कियों का दल भी खासा बड़ा था। एक नजर से देखने की कोशिश की, मालती है या या नहीं। जल्दी में दूर से कुछ पता नहीं चला।

सभा की कार्रवाई हमलोगों ने जल्दी ही पूरी कर ली। इतने शोर-गुल में भाषण सुनना कौन चाहता भला?

अब जलसा शुरू होनेवाला था। मैं मंच से उतर आया। प्रसाद सामने ही खड़ा था। मैंने कहा, "चलूं अब?"

"ऐसा भी कहीं हो सकता है?" प्रसाद बोला, "मुंह तो मीठा कर जाइए।"

"यह क्या बात है भई?" मैंने कहा।

"सब रेडी है," उसने कहा, "आप आइए, आइए तो।"

उसने मुझे एक बैठकखाने में ले जाकर बैठाया। मकान में पैर रखते हुए लगा था, मकान परिचित-सा है, विंध्यवासिनी का रिहाइशी मकान—मालती का घर। मैं अकेला ही बैठा। प्रसाद ने कहा, "बैठिए भाई साहब। जलपान की व्यवस्था हो रही है।"

कहते-कहते ही विंध्यवासिनी कमरे में आ गई। पहले जैसी ही दिखाई दे रही थी। उसके एक हाथ में थी तश्तरी, दूसरे में शरबत का गिलास। बड़ी-सी तश्तरी में बढ़िया-बढ़िया मिठाइयां और समोसे थे।

विंध्यवासिनी ने जैसे ही तश्तरी मेज पर रखी, मैं बोल उठा, "इतना सारा क्यों? इतना कौन खाएगा? थोड़ा-सा निकाल लीजिए।"

वह बोली, "खाइए भी बाबू। ऐसा कौन-सा जादा है? अच्छी दूकान की मिठाई है, आडर देकर बनवाई है। परसाद खुद लाया है खरीद के।"

प्रसाद मन्द-मन्द मुस्करा रहा था। आखिर मैंने खाना शुरू किया।

विंध्यवासिनी बोली,"कितने दिन बाद आपसे मिलना हुआ बाबू। वही, जब आपके घर गई थी। आपने मुकद्दमा खतम नईं कराया।"

"मेरा क्या दोष है, बताइए?" मैंने कहा, "मैंने कोशिश तो की थी। अंत में केस ही छोड़ दिया।"

"वई तो गलती की बाबू," विंध्यवासिनी ने कहा,"अगर आपके हाथ में ई रैता तो मुकद्दमा खतम हो जाता। हमलोग तो बड़े तूफान से होकर निकले हैं।"

फिर कुछ रुककर वह बोली, "मूनू का फिर से ब्याह कर दिया है। इस बार दूसरी बिरादरी में नईं, अपनी ही बिरादरी में। बौना होकर चांद पकड़ने की कोसिस क्या हमें सोहती है?"

मैं खुश होकर बोला, "बहुत अच्छा, वाह! कहां की शादी? दामाद कैसा है?"

विंध्यवासिनी हंसकर बोली, "दामाद तो यई आपके सामने खड़ा है बाबू। बेटा परसाद, बाबू को परनाम कर।"

मैं कुछ विस्मित हुआ, प्रसाद मालती का पति! फिर यह विस्मय भी जाता रहा। प्रसाद के साथ विवाह होना शायद अच्छा ही हुआ है। बराबरी का मेल है। इसके अलावा प्रसाद मालती के बहुत निकट था। अब दोनों अभिन्नहृदय हो गए हैं।

झेंपते हुए प्रसाद ने मेरी चरणधूलि ली। मैंने कहा,"बहुत अच्छा हुआ। पर मालती कहां है? दिखाई नहीं दे रही?"

उसकी मां बोली, "वह छत पर दीये सजा रई है। आज दीवाली है ना? लालटेन-वालटेन से सजाकर दीये बाल रई है। बेटा परसाद, मूनू को बुला ला ना। बाबू से मिल जाए।"

प्रसाद चला गया।

मेरा खाना समाप्त हुआ। मन में मालती को वधू रूप में देखने का आग्रह था। विंध्यवासिनी ने कहा,"यह लोग मेरे पास ई रैते हैं। मेरा ये दामाद बड़ा अच्छा है। आसीरवाद दीजिए बाबू, इस बार मेरे बेटी-दामाद सुखी होवें।"

"जरूर, आशीर्वाद देता हूं," मैंने हार्दिकता से कहा।

प्रसाद अकेला ही लौट आया। विंध्यवासिनी ने पूछा,"क्या हुआ बेटा परसाद ? झूनू कां है ?"

प्रसाद बोला,"वह आई नहीं। बोली, 'दादा के सामने निकलते मुझे लाज आती है'।"

मेरा कौतूहल शान्त नहीं हुआ। मैंने उन लोगों से विदा ली। प्रसाद मुझे गाड़ी तक छोड़ने आया। दूर से मैंने देखा, विंध्यवासिनी का रिहाइशी मकान—अर्थात् मालती का घर— दीपमालाओं से जगमगा रहा है। दूर से मैंने आशीर्वाद दिया, मालती के नए जीवन में भी सदा-सदा ऐसा ही प्रकाश रहे।

मुझे गाड़ी पर चढ़ाकर प्रसाद ने पूछा,"दादा, कल सुबह आप घर रहेंगे ?"

मैंने कहा, "हां, पर क्यों पूछ रहे हो ?"

प्रसाद ने कहा,"एकबार आपसे मिलूंगा। कुछ कहना है आपसे।"

"ठीक है, सुबह नौ बजे के लगभग आ जाना।"

अगले दिन प्रसाद ठीक समय पर ही आ गया। उसके हाथ में मिठाई का डिब्बा था। मैंने पूछा, "फिर ये क्या ले आए ?"

उसने डिब्बा मेज पर रखकर कहा, "झूनू ने आपके लिए भेजा है। कहा, हमारे ब्याह में तो आपका मुंह मीठा हुआ नहीं था। उस अपराध को क्षमा कीजिएगा।"

"तुमलोगों का विवाह कब हुआ ?"

"पिछले आषाढ़ में। वह भी तो पूरा काण्ड हुआ। मौसीजी, याने मेरी सास ब्याह के विषय में एकदम निर्लिप्त थीं। एक बार झूनू का ब्याह टूट चुका था, फिर से ब्याह की बात वे सोचती भी नहीं थी। बल्कि कोई कहता भी, तो वे व्यंग्य करके कहतीं,"अति-घरनी को घर नईं मिलता। मेरी लड़की की नजर ऊंची है। बौने को चांद पकड़ने की साध है। सरीफ घर में ब्या नईं हो, तो महारानी को रुचेगा नईं। अब मैं ऐसा फरमाइसी सरीफ कां से लाऊं? कुम्हारटोली से माटी का सरीफ तो घड़वा के ला नईं सकती। एक बार तो कोसिस कर देखी। खेती-किसानी करता था तो क्या, सहदेव छोकरा अच्छा ई था। पर लड़की के ई तो भाग फूटे हैं।

घर-बार उसके भाग को नहीं सहा।" हाल मित्तर तो शादी का नाम सुनते ही खीझिया उठता था। कहता था, "फिर ब्याह ! उससे तो अच्छा है, झुनू अपने पैरों पर खड़ी होकर कुछ कमाए। अरे, कितने लोग आ रहे हैं काम के लिए। झुनू मान जाए तो क्या कमी है ? पर लड़की तो महा जिद्दी है।"

मैंने कहा, "मालती परेशान होकर नौकरी की तलाश में आई थी। पर मैं कुछ भी नहीं कर सका।"

प्रसाद ने कहा, "हां, मुझे सब बताया है उसने। अखबारों में आवश्यकता के विज्ञापन देखकर उसने कुछ अर्जियां भी दी थीं। दो-चार जगहों से इन्टरव्यू के लिए भी पत्र आए थे। पर कहीं भी नौकरी नहीं जुटी।"

मैंने कहा, "मैंने भी कुछ लोगों से कह रखा था उपयुक्त काम के लिए। पर कुछ हो नहीं सका।"

प्रसाद ने कहा, "उसे दवाइयों की कैनवासिंग का एक काम मिला था। तनख्वाह कम थी, बिक्री पर कमीशन मिलता था। बहुत घूमने का काम था। बड़ी मेहनत थी। मैंने कहा, 'वह काम मत लेना झुनू, दो दिन में बीमार पड़ जाओगी।'" वह बेहद तनाव से गुजर रही थी। वह रो पड़ी। बोली, 'अब मैं करूं क्या ?' मैंने सांत्वना दी। कहा, "जो कर रही हो, वही करो। प्राइवेट मैट्रिक दो, कॉलेज में भर्ती हो जाओ, फिर देखा जाएगा।" झुनू चली गई। फिर कई दिन उससे मुलाकात नहीं हुई।

"एक दिन जोरों से बरसात हो रही थी। मैं दूकान में ही था। सड़क पर पानी इकट्ठा हो गया था। कोई ग्राहक नहीं था। छक्कू भी नहीं आया था। मैं अनमने भाव से बैठा-बैठा बरसते पानी को देख रहा था। अचानक न जाने कहां से झुनू आ पहुंची। उस बारिश में वह छाता लिए बिना ही निकल पड़ी थी। साड़ी भीगकर तरबतर थी। गंदे पानी में से चलती हुई वह आई थी। मैं हैरान ! झुनू ने कहा, "घर में रहा नहीं गया प्रमाददा। इसीलिए भाग आई हूं।" मैंने कहा, 'बड़ी बहादुरी दिखाई है। एक छाता लेकर भी नहीं आ सकी ? भीगकर तो बीमार पड़ जाओगी।' वह कातर होकर बोली, 'उससे किसीका क्या आता-जाता है ? मर जाऊं, तो मेरी जान बचे।' मैं वातावरण हलका करने के लिए

बोला, 'इसी बीच अकाल-वैराग्य हो गया है ?' झूनू रोते-रोते बोली, 'मेरा कोई नहीं है प्रसाददा, कोई भी नहीं। मां निर्विकार हैं—अपनी किरायेदारिनों के सिर पर सवार होकर रुपया कमाने में व्यस्त। और बाप के रूप में जो अपना परिचय देता है, वह एक बिच्छू है। मां कुछ बोलती नहीं, इसलिए इधर वह सिर उठाने लगा है। आज मेरे साथ जोरों का झगड़ा हो गया। कहता क्या है—नवाबजादी का गद्दों पर बैठे-बैठे भकोसना अब नहीं चलेगा। अभी भरपूर जवानी है। यही तो कमाई की उमर है। कमाई करो और खाओ। नहीं तो—' झूनू क्रुद्ध होकर बोली, 'मैं क्या तुम्हारे पैसे का खाती हूं ? मेरे अपने पिता जो रख गए हैं, उसी-में का खाती हूं।' हारू मित्तर गंदी-गंदी गालियां बकता हुआ बोला, 'तेरा कौन-सा बाप कितना रख गया था हरामजादी ? तेरी शौक की शादी के पीछे इतने रुपये बरबाद हुए, उनका हिसाब रखा है ?' झूनू बोली, 'मां को कहती हूं जाकर सब।' हारू मित्तर बोला, ''बोल दे ना, कलमुंही। तेरी मां अब मेरी मुट्ठी में है। उसने घर, चकले, सबकी मेरे नाम वसीयत कर दी है। मैं न दूं, तो उसे खाने को भी नहीं मिले। जिस दिन कहूंगा, उसी दिन सारी संपत्ति का दानपत्तर मेरे नाम कर देगी।' झूनू बोली, ''मुझे चाहिए भी नहीं तुम्हारी पाप की दौलत।'' इसके बाद ही वह गुस्से में भरकर भीगती-भीगती मेरी दूकान में चली आई।

मालती सच ही बड़ी मुसीबत में पड़ गई थी। मैंने पूछा, 'उसके बाद क्या हुआ ?

''बरसात थम गई,'' प्रसाद ने कहा, ''मैं 'तृप्ति' कैफे से चाय लाने गया। गरम चाय पीकर झूनू को जरूर कुछ राहत महसूस होगी। चाय लेकर लौटा तो देखा, झूनू ने सूखे कपड़े से सिर पोंछ डाला है, पर भीगी साड़ी नहीं बदली है। इसी हालत में मैले कपड़ों के गट्ठर पर बैठी वह कोई गीत गुनगुना रही है—रवि ठाकुर का गीत। उसके बोल मुझे याद हैं, क्योंकि वे बोल ही हमदोनों को नजदीक ले आए थे।''

कौतूहल से मैंने पूछा, ''कौन-सा गीत था ?''

''ओई मालतीलता दोले पिआल तरुर कोले (वह मालतीलता पिआल वृक्ष की गोद में झूल रही है)','' प्रसाद ने कहा।

मैंने हंसकर पूछा, "पिआल तरु कौन है ?"

प्रसाद ने कहा, "मेरा भी यही प्रश्न था झूनू से। मैंने भी भेदभरे स्वर में उससे यही प्रश्न किया था। चाय की चुस्की लेते-लेते वह मुस्कुराकर बोली, "मेरे पिआल तरु तुम हो प्रसाददा।' 'क्या मतलब ?' मैंने आश्चर्यचकित होकर पूछा। झूनू ने अचानक साग्रह मेरा हाथ पकड़कर पूछा, 'तुम मुझसे ब्याह करोगे प्रसाददा ? तुम मुझसे ब्याह कर लो, कर लो। मेरा कोई नहीं है प्रसाददा। तुम मुझे बचाओ।' मुझे बड़ा मजा आ रहा था। जिससे मैं बचपन से ही एकतरफा प्रेम करता आ रहा हूं, वही लड़की भीगे कपड़ों में, धोबी की दूकान में मैंले कपड़ों के गट्ठर पर बैठी हुई, प्रेम-निवेदन ही नहीं कर रही है अपने आपको मेरे आगे समर्पित भी कर रही है। मैं अचानक ही ठठाकर हंस पड़ा। लगा, झूनू इससे आहत हुई, है। वह बोली, "हंस क्यों रहे हो ? मेरा मजाक उड़ा रहे हो ?' मैंने जल्दी से कहा, 'नहीं झूनू, नहीं। तुमसे मैं जरूर शादी करूंगा। एकदम राजयोग है। खानगी के बेटे के साथ खानगी की बेटी का ब्याह जन्महीन के साथ जन्महीन का। बराबरी का सबंध है।' झूनू आश्वस्त होकर बोली 'ठीक कहा प्रसाददा, बराबरी में ब्याह। पर एक अनुरोध कर सकती हूं ?' मैंने कहा,'कहो, कहो।' झूनू ने कहा 'तुम एक पैसा भी दहेज नहीं मांगोगे।' मैंने कहा, 'मुझे कुछ भी नहीं चाहिए, मैं सिर्फ तुम्हें चाहता हूं तुम्हें मैं हमेशा से चाहता आ रहा हूं। चलो, मौसीजी को बता आएं।' झूनू ने कहा, 'नहीं, उनलोगों को कुछ भी नहीं बताएंगे। हम चुपके-से कालीघाट में ब्याह करेंगे। तुम्हें जरूरी लगे तो रजिस्ट्री भी करवा सकते हैं' झूनू के कहे अनुसार हमलोगों ने चुपके-से, छिपाकर विवाह किया हां, कुछ बराती-घराती जरूर थे। वे थे—घण्टे झण्टू मन्ना मेरे हिटलर और नेपा—नेपोलियन।"

"उनका परिचय जानता हूं," मैंने बताया।

शादी के रजिस्ट्री ऑफिस में भोन्ता और [illegible] सबने मिलकर एक होटल में दावत उड़ाई।

सास लड़की से कितने दिन विगड़ी रहतीं ? उन्होंने कहा, 'मैं सिरफ एक शर्त पर ये व्या मान सकती हूं। लड़की-जमाई को मेरे घर पर रैना होगा।' मैं तो घरजमाई वनने के लिए हरगिज तैयार नहीं था, पर झूनू के समझाने पर मैं मान गया कि मैं ससुराल में रहूंगा, पर दोनों जनों का खाना-खर्चा मैं ही दूंगा। मेरी लांड्री से जो आय होती है, उससे दो लोगों का काम हंसते-खेलते चल सकता है।"

"तुम्हारी सास के विचार तो पता चले, पर हारू मित्तर ने क्या कहा ?"

"वे क्या कहेंगे ? जिस दिन मेरी सास ने विल वदलकर सारी संपत्ति झूनू के नाम लिख दी। उस दिन हारू मित्तर महाशय ने खाट पकड़ ली। उनका वात-रोग बढ़ गया। अव मकानों का किराया भी नहीं वसूलते। हम भी उन्हें तंग नहीं करते। वे वैठे-वैठे खाते हैं, और सासजी के आगे तिनतिनाते रहते हैं। और किरायेदारों को संभालते हैं हम—मैं और झूनू।"

"अव समझा, मालती शर्म के मारे मेरे सामने क्यों नहीं आई थी। ये लज्जा केवल मालती की ही नहीं थी, मेरी भी थी।"

वन की अंधेरी छाया में सरस्वती का तीर न जाने कव लुप्त हो चुका है। गौतम ऋषि नहीं रहे, सत्यकाम जावाल भी खो गया है। पर जावाला अव भी है, और है विश्वका आदिमतम पेशा, और लगता है, रहेगा भी। ये अमर हैं, अजर हैं।

